मिलि सुद्धि लई सगरी। हरषे हरिको मिलि ज्यों नगरी॥ तहँ जाय लखी रघुवीरप्रिया। कृश अङ्ग मली सुखहीन सिया॥ पुनि रावण आनि कलेश कियो। सुनि क्रोध भयो हनुमान हियो॥ सुंदरी दइ डारि निहारि प्रिया। सुखदुःख भयो हनुमन्त हिया॥ रघुबीरको दूत प्रसन्नकिया। फलखानको आयसु मांगि लिया॥ लखि बाग लग्यो फल खान हनू। उतपात महा अतिबाग घनू॥ मनुजादनि जाय पुकार करी। हनुमान हनी सेना सगरी॥ घननाद गज्यो पवनातमजा। दशकन्ध सभामहँ जाइ गजा॥ चलिगो रिपु ज्यों न डरयो मनमें। मद-मत्त गयन्दनके घनमें॥ घनतेल लँगूर लपेट सही। जलसो निजपेकरि लङ्क दही॥ हनुमानके हांकते गर्भ गिरयो। मनुजाद त्रिया नहिं धीर धरयो॥ सियआयसु लेकरि सिन्धु तरयो। हनुमान सदेह कह्यो सिगरयो॥ सुनिके हियसिन्धु अनन्द नरयो सजि सेन समूह पयान करयो॥ बल देखि पयोनिधि पांथ-परयो। नल देखिके सेतु समुद्र तरयो॥ सुनि मयतनया पिय-पांय परी। प्रभु व्यापकविश्व विराटहरी॥ तब जाय सभाह विचार करी। तपसीन धरो हमरी नगरी॥ तिन मन्त्रिन मन्त्र कुमन्त्र कियो। लघु बंन्धुहि मारेसि लात हियो॥ रघुवीरके तीर गयो भजिकें। नृपको अविवेक कह्यो सजिके॥ प्रभु लङ्क हि अङ्गदको पठयो। पद रोपि सभाप्रण जाइ ठयो॥ दशकन्ध सभा महँ बीरबचा। नटरयो पदज्यों महिसङ्ग रचा॥ बरवीर सभा मद मारि फिरयो। रघुवीर पदाम्बुज पाइ परयो १॥ दोहा सुनि कृपालु अङ्गदवचन बूझे मन्त्रीयूह। अनी चारि करि द्वारचहुँ लागे कीशसमूह २॥

इति श्रीसुन्दरकाण्ड समाप्तम॥

भुजङ्गप्रयातछन्द॥ लगो सेन सव्यूह चार्‍यो दुआरे। भयो शोर देवारि नादे पुकारे॥ तबै बीर बांके दशानन बुलाये। सबै जाय खाहु रीछ वानर जो आये॥ महारोष-मातेहि देवारि गाजै। महामत्त मातङ्गराजो विराजै। बनौ बाइनौ व्यूहकै बाजि साजै। ध्वजा बाण नीशान घनघोर गाजै॥ करै युद्ध नानादि योधा प्रचारै। लरैं वीर कपि भालु चार्‍यो दुआरे॥ फिरैं रुण्ड बेमुण्ड जै जै पुकारै। तहां राम सौमित्र रणमध्य मारै॥ तबै वीर रणधीरबन्धू जगाये। कही जो कथा सोय जेहि भांति लाये॥ लर्‍यो जाइ रघुवीर जो युद्ध मद्धे। गयो त्यागि तन जाइ योगी न लद्धे॥ सुनौ रैनिचर ईसने बन्धु मार्‍यो। तबै तातसों बौद्ध घननाद कार्‍यो॥ लख्यो प्रात पौरुष पिता जो हमार्‍यो। कर्‍यो क्रोध शक्रारि सेना बिडार्‍यो॥ तबै ताहि ऋच्छेश गहिकै प्रभायो। गयो मूर्च्छिकै तुरत लङ्का पठायो॥ हत्यो ताहि सौमित्रना युद्ध मध्ये। करै देव जै जै सआनन्द वध्ये॥ सुन्यो तीयने पीयको वीर सांचो। भई सो सती सत्य तिहुँलोक मांचो॥ सुन्यो तातको बद्ध दशकन्ध शोचा। मरै बाण नहिं हाथ भे पूत पोचा॥ हनों आजु रणमध्य रामै प्रचारी। कहा बापुरो बानरा बीर चारी॥ चलै साजि सेना सबै बीर गाजैं। करैं राग मारू पणव भेरि बाजैं॥ तबै रामके सामुहे रथ जो आयो। हिये दृष्टि श्रीराम सौमित्र लायो॥ तबै राम शरको सर्काटि खैंचि बाँध्यो। लियो चाप कर साधि वर ताहि साध्यो॥ छुटे बाण दशशीशके शीश छीने। लसै शीश अतिशय भये ते नवीने॥ तबै राम लङ्केशको मन्त्र बूझो। हमारे शरोसो न दशकन्ध जूझो॥ सुनौ नाथ यहि ईशको शीश दीन्हे। मही होहि भोगे जिन्हैं पुण्य कीन्हे॥ हिये

मध्य पाके सुधा शीश पोषे। छुटे बाण यकतीस हियमैं सो शोषे॥ मरे नाथ दशशीश सुर साधु तोषे। हत्यो धूम्रि रघवीर लङ्केश बीषे। बजे दुन्दुभी व्योमचर साधु गावैं। नचैं सुर बधू वृष्टि सुमनोंकि लावैं॥ दियो तासुके बन्धुको राम टीका। तिसै हेतु कपि भालु ल्यायो असीका॥ तबै राम श्रीजानकी बोलि लीन्हो। धरै देह द्विजको अनल आगि दीन्हो॥ लिये सङ्ग कपि भालु सीता समेता। चले राम चढ़ि यान उत्तर निकेता॥ चल्यो यान उत्ताल तिरथै सो आयो। तहां राम हनुमान अवधै पठायो॥ दोहा॥ लौक भाल सिय सङ्गले तिरबेणी को न्हाय। भरद्वाजको बन्दि प्रभु कैवट भेंटयो आय॥

इति लङ्काकाण्ड समाप्तम्॥

छन्द॥ शुभ सगुण अवध जनाइ तेहि चण होत मुद मङ्गल महा। शीतल सुगन्ध सुमन्द मारुत अमल जल सुरसरि वहा॥ शुभ अङ्ग फरकत भरतके हिय हुलसि अहि आनँद लहा। तेहि समय श्रीहनुमान प्रभुको आइ सन्देशो कहा॥ मन हरष भरतं सुनाइ गुरुकहँ मातु सकल बुलाइकै। कहि खबरि श्रीरघुवीरकी तिन सजे मङ्गल जाइकै॥ गुरु बन्धु संयुत चले प्रभुपर निरखि पदपङ्कज गहे। धरि भरत भुज उर ल्याइ प्रभु राजीवलोचन जल बहे॥ पुनि प्रेमयुत सब मातु भेटीं निरखि प्रभु हुलस्यो हियो। तिन कनक मणिगण बसन भूषण आनि महिदेवन दियो॥ शुभ समय जानि वशिष्ठ वेगि लिवाइ लियो सुमन्तको। सब राजसाज सम्हारि तेहि चण राज दिय भगवन्तको॥ सिय सहित रघुकुलमणि बिराजत सुभग सिंहासन परैं। सुर सुमन बरषहिं

हिये हरषहिं ब्रह्मादि सब जै जै करैं॥ गहि छत्र चामर चमर असि धनु वीर तरकसके लये। भरतादि अनुज बिभीषणाङ्गद हनुमान बित चरणन दये॥ सुनु सिया श्रीरघुबीरको अविवेक सुनि उरमें धरे। कह दास तुलसी जन्मसुख लहि जलधि जग बिन श्रम तरे॥ दोहा॥ नित नव मङ्गल अवधपुर करहिं सकल नरनारि॥ लहहिं चारिफल अछत तनु रघुबररूप निहारि॥ छन्द॥ नित प्रीति सरित अन्हाइ बन्धुन सहित प्रभु भोजन करैं। गज बाजि राजसमाज लखि सब देखि बन उपबन फिरैं॥ बैठे सभामहँ जाइ श्रीरघुबीर दुख सबके हरे। हरित्याव श्वान उलूकको लखि लोग सब बिस्मय करे। माण्डवी श्रुतिकिरति उरमिलासो सबनि सुत द्वै द्वै जने। जानकी सुत युगल जाये सब निगम आनँद घने॥ सनकादि नारद आदि मुनिवर सकल अवधहि आवहीं। लखि जाहिं रघुवरके चरित सब विधिहिं जाय सुनावहीं। यक बारको महिदेवको सुत सभामहँ आयो मरयो। गुरु बूझि तपते मारि शूद्रहि तबहिंसे उठि जियो परयो॥ यहि भांति रामचरित्र परमपवित्र नित नूतन करैं। कहि दासतुलसी सुनत सबके बचन मन पातक टरे ३॥ दोहा॥ सुनि सीताके युगल सुत राम कीन्ह अनुमान॥ लोक सिखावन दीन्ह हित बोले श्रीभगवान ४॥

इति श्रीउत्तरकाण्ड समाप्तम॥

तुलसी सतसई ॥

नमो नमो श्रीराम प्रभु परमातम परधाम। जेहि सुमिरत सिध होत हैं तुलसी जन मन काम॥ राम बाम दिशि जानकी लषण दाहिनी ओर॥ ध्यान सकल कल्याणकर तुलसी सुरतरु तोर॥ परमपुरुष परधाम वर जापर अपर न आन। तुलसी सो समुझत सुनत राम सोई निर्वान॥ सकल सुखद गुण जासु सो राम कामनाहीन। सकल कामप्रद सर्वहित तुलसी कहहिं प्रवीन॥ जाके रोमैरोम प्रति अमित अमित ब्रह्मण्ड। सो देखत तुलसी प्रकट अमल सुअचल प्रचण्ड॥ जगतजननि श्रीजानकी जनक राम शुभ रूप। जासु कृपा अति अघहरणि करणि विवेक अनूप॥ तात मातुपर जासुके तासु न लेश कलेश। ते तुलसी तजि जात किमि तजि घर तर परदेश॥ पिता विवेकनिधान वर मातु दया युत नेह। तासु सुवन किमि पाइ है अनत अटन तजि गेह॥ बुद्धि बिनय गतिहीन शिशु सुपथ कुपथ गत जान। जननि जनक तेहि किमि तजे तुलसी सरिस अजान॥ मात तात सियरामरुख बुधि विवेक परमान। हरत अखिल अघ तरुण तर तब तुलसी कछु जान॥ जिन्हते उद्भव वर विभव ब्रह्मादिक संसार। सुगति तासु तिनकी कृपा तुलसी बदहि विचार॥ शशि रवि सीताराम नभ तुलसी उरसि प्रमाण॥ उदित सदा अथवत न सो कुवलित तमकर हान॥ तुलसी कहत विचार गुरु राम सरिस नहि आन। जासु कृपा शुचि होति रुचि विशद विवेक प्रमान॥ राररूप अनूप अल

हरत सकल मलमूल। तुलसी मर्म हियो गलहि उपजत सुख अनुकूल ॥ रेफरमित परमातमा सह अकार सिय रूप। दीरघ मिलि बिधि जीवइव तुलसी अमल अनूप ॥ अनुस्वार कारण जगत श्रीकर करन अकार॥ मिलत अकार मकारसों तुलसी हरि दातार॥ ज्ञान विरागै भक्ति सह मूरति तुलसी पेषि। वरणत गति मति अनुहरत महिमा विशद विशेषि॥ नाम मनोहर जानि जिय तुलसी करि परमान॥ वरण विपर्यय भेदते कहो सकल शुभ जान॥ तुलसी शुभ कारण समुझि गहत रामरस नाम। अशुभहरण शुचि शुभकरण भक्ति ज्ञान गुणधाम॥ तुलसी राम समान वर सपनेहु अपर न आन। तासु भजन रतिहीन अति चाहसि गति परमान॥ अहि रसना थन धेनु रस गणपति द्विज गुरुवार। माधव सित सिय-जनम तिथि सतसैया अवतार॥ भरण हरण अति अमिति विधि तत्त्व अर्थ कविरीति। सङ्केतिक सिद्धान्त मत तुलसी वदन विनीति॥ विमल बोध कारण सुमति सतसैया सुखधाम॥ गुरुमुख पढ़ि गति पाइ हैं विरति भक्ति अभिराम॥ मन भय जरसत लाग युत प्रकट छन्द युत होइ। सो घटना शुभदा सदा कहत सुकवि सब कोइ॥ जत समान तत वान लघु अपर वेद गुरु मान संयोगादि विकल्प पुनि पद न अन्त कहजानु॥ दीरघ लघ करि तहँ पठव जहँ मुख लहि विश्राम। प्राकृत प्रकट प्रभाव इह जनित बुधाबुध बाम॥ द्वइ गुरु सीता सारगण रा-मसोगुरुलघु होइ॥ लघु गुरु रमा प्रतच्छगन युगलहु हरगण सोइ॥ सहसनाम मुनि भनित सुनि तुलसी बल्लभ नाम। सकुचति यह हंसि निरखि सिय धरमधुरन्धर राम॥ दम्पति रस रसना दशन परिजन बदन सुगेह। तुलसी हर हित वरण शिशु सम्पति सरल सनेह॥ हिय निर्गुण नयन सगुण रसना राम

सुनाम। मनहुँ पुरट सम्पुट लसत तुलसी ललित ललाम॥ प्रभु गुणगण भूषण वसन वचन विशेष सुदेश। रामसुकीरति कामिनी तुलसी करतब केश॥ रघुबरकी रति तियवदन इव कह तुलसीदास। शरदप्रकाश अकाशछवि चारु चिबुक तिल जास॥ तुलसी शोभत नखतगण शरदसुधाकर साथ। मुक्ता झालर झलक जनु रामसुयश शिशु हाथ॥ आतम मध्य विवेक बिनु राम भजत अलसात। लोक सहित परलोककी अवश विनाशी बात॥ बरु मराल मानस तजै चन्द्र शीत रवि घाम॥ मोर मदादिक जो तजै तुलसी तजै न राम॥ आसन दृढ़ आहार दृढ़ सुमति ज्ञान दृढ़ होय। तुलसी विना उपासना बिनु दुलहेको जोय॥ रामचरण अवलम्ब बिनु परमारथको आश। चाहत वारिदबुन्द गहि तुसी चढ़न अकाश॥ रामनाम तरुमूल रस अष्ट पत्र फल एक। युगल सन्त शुभ चारि जग वरणत निगम अनेक॥ राम कामतरु परिहरत सेवत कलितरु ठूँठ। स्वारथ परमारथ चहत सकल मनोरथ झूंठ॥ तुलसी केवल कामना रामचरित आराम। निशिचर कलि करि निहत तरु मोहि कहत विधि वाम॥ स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एकही ओर। द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर॥ हितसम हित रति रामसन रिपुसन बैर विहाव॥ उदासीन संसारसन तुलसी सहज सुभाव॥ तिलपर राखे सकल जग विदित विलोकत लोग॥ तुलसी महिमा रामकी को जग जानन योग॥ जहाँ राम तहँ काम नहिं जहाँ काम नहिं राम। तुलसी कबहीं होत नहिं रवि रजनी इक ठाम॥ राम दूर माया प्रबल घटति जानि मनमाहिं। बढ़ति भूरि रवि दूरि लखि शिरपर पगुतर छाहिं॥ सम्पति सकल जगतकी

श्वासा सम नहिं होय। श्वास सोइ तजि रामपद तुलसी अलग न खोय॥ तुलसी सो अति चतुरता रामचरण लव-लीन। परमन परधन हरणकहँ गणिका परम प्रवीन॥ चतुराई चूल्हे परै यम गहि ज्ञानहि खाय॥ तुलसी प्रेम न रामपद सब जर मूल नशाय॥ प्रेम शरीर प्रपञ्च रुज उपजी बड़ी उपाधि॥ तुलसी भली सो बैदई बेगि बांधई व्याधि॥ राम विटप तर विशद वर महिमा अगम अपार। जाकहँ जहँलगि पहुँच है ताकहँ तहँलगि डार॥ तुलसी कोशलराज भजु जनि चितवै कहुँ ओर। पूरण राम मयङ्क मुख करु निज नयन चकोर॥ ऊँचे नीचे कहुँ मिलै हरि-पद परम पियूष। तुलसी काम मयूषते लागे कोनेउ रूप॥ स्वामी होनो सहज है दुर्लभ होनो दास। गाडर लाये ऊनको लागीं चरै कपास॥ चलब नीति मग रामपद प्रेम निबाहब नीक। तुलसी पहिरिय सो बसन जो नय वारत फीक॥ तुलसी रामकृपालुते कहि सुनाव गुण दोष। होउ दूबरी दीनता परम पीन सन्तोष॥ सुमिरन सेवन रामपद रामचरण पहिचान। ऐसेहुँ लाभ न ललक मन तो तुलसी हितहान॥ सब सङ्गी बाधक भये साधक भयें न कोय। तुलसीराम-कृपालुतें भली होय सो होय॥ तुलसी मिटै न कल्पना गये कल्पतरुछाँह। जबलगि द्रवै न करि कृपा जनकसुताको नाँह॥ विमल बिलग सुख निकट दुख जीवन समय सुरीति। रहित राखिये रामको तजेते उचित अनीति॥ जाय कहब करतूति बिनु जाय योग बिन छेम। तुलसी जाय उपाय सब बिना रामपदप्रेम॥ तुलसीं रामहिं परिहरे निपट हानि सुनु मोद। जिमि सुरसरिगत सलिल वर सुरा सरिस गङ्गोद॥ हरे चरहिं तापहिं बरे फरे पसारहिं हाथ।

तुलसी स्वारथ मीत जग परमारथ रघुनाथ। तुलसी खोटे दासकर राखत रघुवर मान। ज्यों मूरखउ परोहितहि देत दान यजमान॥ ज्यों जग बैरी मीनको आपु सहित परिवार। त्यों तुलसी रघुनाथ बिन आपनि दशा विचार॥ तुलसी राम भरोस शिर लिये पाप धरि मोट। ज्यों व्यभिचारी नारिकहँ बड़ी खसमकी ओट॥ स्वामी सीतानाथजी तुमलगि मेरी दौर। तुलसी काग जहाजको सूझत और न ठौर॥ तुलसी सब छल छांड़िके कीजै राम सनेह। अन्तर पतिसों है कहा जिन देखी सब देह॥ सबही कोप रखे लखे बहुत कहे का होय। तुलसी तेरो राम तजि हित जग और न कोय॥ तुलसी हम-सों रामसों भलो मिलो है सूत। छांड़े बनै न सँग रहे ज्यों घर-माहँ कपूत॥ कोटि विघन सङ्कट विकट कोटि शत्रु जो साथ॥ तुलसी बल नहिं करि सकें जो सुदृष्ट रघुनाथ॥ लगन मुहूर-त योगबल तुलसी गनत न काहि। राम भये जेहि दाहिने सबै दाहिने ताहि॥ प्रभु प्रभुता जाकहँ दई बोल सहित गहि बांह। तुलसीते गाजत फिरहिं रामछत्रकी छांह॥ साधन साँसति सब सहत सुमन सुखद फल लाहु॥ तुलसी चातक जलदकी रीझि बूझि बुध काहु। चातक जीवन जलदकहँ जानत समय सुरीति। लखत लखत लखि परत है तुलसी प्रेम प्रतीति॥ जीव चराचर जहँलगे है सब-को प्रिय मेह। तुलसी चातक मन बसो घनसों सहज सनेह॥ डोलत बिपुल बिहङ्ग बन पियत पोखरीबारि। सुयश धवल चातक नवल तोर भुवन दशचारि॥ मुख मीठे मानस मलिन कोकिल मोर चकोर। सुयश ललित चातक बलित रहो भुवन भरि तोर॥ माँगत डोलत है नहीं तजि घर अनत न जात। तुलसी चातक भक्तकी उपमा देत लजात॥

तुलसी तीनोंलोकमहँ चातक हीको माथ। सुनियत जासु न दीनता किये दूसरे नाथ॥ प्रीति पपीहा पयदकी प्रकट नई पहिचान। याचक जगत अधीन इन किये कनौड़ो दान॥ ऊंचो जान पपीहरा नीचो पियत न नीर। कै याँचै घनश्यामसों कै दुख सहै शरीर॥ कै बरषै घन समय शिर कै भरि जनम निराश। तुलसी चातक याचकहि तऊ तिहारी आश॥ चढ़त न चातक चित कबहुँ प्रिय पयोदके दोष। याते प्रेमपयोधि बर तुलसी योग न दोष॥ तुलसी चातक माँगनो एक एक घन यानि॥ देत सो भूभाजन भरत लेत घूंट भरि पानि॥ द्वै अधीन याचत नहीं शीश नाथ नहिं लेय। ऐसे मानौ माँगनहिं को वारिद बिन देय॥ पवि पाहन दामिनि गरज अति झकोर खर खीझि। दोष न प्रीतमरोष लखि तुलसी रागहि रीझ॥ कोन जियाये जगतमहँ जीवनदायक पानि। भयो कनौड़ो चातकहि पयद प्रेम पहिचानि। मान राखिबो माँगिबो पियसों सहज सनेह। तुलसी तीनों तब फबैं जब चातक मन लेह॥ तुलसी चातकही फबैं यान राखिबो प्रेम। वक्रबूंद लखि स्वातिको निदरि निबाहत नेम॥ उपल बरषि गरजत तरजि डारत कुलिश कठोर। चितव कि चातक जलद तजि कबहुँ आनकी ओर॥ बरषि परुष पाहन जलद पक्ष करै टुक टूक। तुलसी तदपि न चाहिये चतुर चातकहि चूक॥ रटत रटत रसना लटी तृषा सूखिगो अङ्ग। तुलसी चातकके हिये नित नूतनहि तरङ्ग॥ गङ्गा यमुना सरस्वती सातसिन्धु भरिपूर। तुलसी चातकके मते बिन स्वाती सब धूर॥ तुलसी चातकके मते स्वाती पियत न पानि। प्रेमतृषा बढ़तौ भलो घटे घटेगी कानि॥ सर सरिता चातक तजै स्वाती सुधि नहिं लेइ।

तुलसी सेवक वश कहा जो साहब नहिं देइ॥ आश पपीहा पयदकी सुनु हो तुलसीदास। जो अँचवै जल स्वातिको परिहरि बारहमास॥ चातक घन तजि दूसरे जियत न नाई नारि। मरत न माँगे अर्द्ध जल सुरसरिहूको वारि॥ व्याधा बधो पपीहरा परो गङ्ग जल जाय। चोंच मूंदि पीवै नहीं धिग पिय मों प्रण जाय॥ बधिक बधो परि पुण्यजल उपर उठाई चोंच। तुलसी चातक प्रेमपट मरत न लायो खोंच॥ चातक सुतहि सिखाव नित आन नीर जनि लेहु। ये हमरे कुलको धरम एक स्वातिसों नेहु॥ दरशन परशन आन जल बिनु स्वाती सुनु तात। सुनत चेचुवा चित चभो समुझि नीति वर बात॥ तुलसी सुतसे कहत हैं चातक बारम्बार। तात न तरपन कीजियो बिना बारिधरबार॥ बाज चञ्चु गत चातकहि भई प्रेमकी पीर। तुलसी परबश हाड़ मम परि है पुहुमी नीर॥ अण्ड फोरि किय चेचुवा तुषा परो नीहार। गहि चञ्चुल चातक चतुर डाखो बारहि बार॥ होय न चातक पातकी जीवनदानि न मूढ़। तुलसी गति प्रहलादकी समुझि प्रेमपद गूढ़॥ तुलसीके मत चातकहि केवल प्रेम-पियास। पियत स्वातिजल जान जग तावत बारहमास॥ एक भरोसो एक बल एक आश विश्वास। स्वातिसलिल रघुनाथ वर चातक तुलसीदास॥ आलबाल मुक्ताहलनि हिय सनेह तरुमूल। हेरु हेरु चित चातकहि स्वातिसलिल अनुकूल॥ रामप्रेम बिन दूबरे रामप्रेम सह पीन। विशद सलिल सरवर बरन जन तुलसी मन मीन॥ आप बधिक वर वेष धरि कहै कुरङ्गमराग। तुलसी ज्यों मृगमन मुरे परे प्रेमपट दाग॥

इति प्रेम भक्ति निर्देशः प्रथमः सर्गः १॥

खेलत बालक व्याल सँग पावक मेलत हाथ। तुलसी शिशु पितु मातु इव राखत सिय रघुनाथ॥ तुलसी केवल रामपद लागै सरल सनेह। तौ घर घट बन बाटमहँ कतहुँ रहे किन देह॥ कै ममता करु रामपद कै ममता करु हेल। तुलसी दोमहँ एक अब खेल छाँड़ि छल खेल॥ कै तोहि लागहि राम प्रिय कै तु राम प्रिय होहि। दुहुमहँ उचित सुगम समुझि तुलसी करतब तोहि॥ रावणारिके दास सँग कायर चलहि कुचाल। खरदूषण मारीच सम मूढ़ भये वश काल॥ तुलसीपति दरबारमहँ कमी वस्तु कछु नाहि। कर्महीन कलपत फिरत चूक चाकरीमाहि॥ राम गरीब-नेवाज हैं राज देत जन जानि। तुलसी मन परिहरत नहिं घुरबिनियांकी बानि॥ घर कीन्हें घर होत है घर छाड़े घर जाय। तुलसी घर बन बीचही रहो प्रेमपुर छाय॥ राम राम रटिबो भलो तुलसी खता न खाय। लरिकांईते पैरिबो धोखे बूड़ि न जाय॥ तुलसी बिलम न कीजिये भजि लीजे रघुबीर। तनतरकशते जात है श्वास सारिखे तीर॥ रामनाम सुमिरत सुयश भाजन भये कुजाति। कुतरु कुसुम पुरराजबन लहत भुवन विख्याति॥ नाममहातम साखि सुनु नरको कैतिक बात। सरवरपर गिरिवर तरे ज्यों तरुवर-के पात॥ ज्ञान गरीबी गुण धरम नरम बचन निरमोष। तुलसी कबहुँ न छाँड़िये शील सत्य सन्तोष॥ अशन वसन सुत नारि सुख पापिहुके घर होइ। सन्तसमागम रामधन तुलसी दुर्लभ दोइ॥ तुलसी तीरहिके बसे अवशि पाइये थाह। वेगहि जाय न पाइये सर सरिता अवगाह॥ डग अन्तर मग अगम जल जलनिधि जलसञ्चार। तुलसी करिया कर्मबश बूड़त तरत न बार॥ तुलसी हरि अपमानते होत

अकाज समाज। राज करत रज मिलि गयो सदल सकुल कुरुराज॥ तुलसी मीठे वचनते सुख उपजत चहुँ ओर। वशीकरण यक मन्त्र है परिहरु वचन कठोर॥ रामकृपाते होत सुख रामकृपा बिन जात॥ जानत रघुवर भजनते तुलसी शठ अलसात॥ सनसुख ह्वै रघुनाथके देहु सकल जग पीठि। तजे केचुरी उरगकहँ होत अधिक अति डीठि॥ मरयादा दूरहि रहे तुलसी किये विचार॥ निकट निरादर होत है जिमि सुरसरिवरवार॥ राम कृपानिधि स्वामि मम सब विधि पूरणकाम। परमारथ परधाम वर सन्त सुखद बलधाम॥ रामहि जानहि राम रट भजु रामहि तजु काम। तुलसी राम अजान नर किमि पावहिं परधाम॥ तुलसी पति रति अङ्क सम सकल साधना सून। अङ्क रहित कछु हाथ नहिं सहित अङ्क दश गून॥ तुलसी अपने रामकहँ भजन करहु इक अङ्क। आदि अन्त निरवाहिबो जैसे नवको अङ्क॥ दुगुणे तिगुणे चोगुणे पञ्च षष्ठओ सात। आठौते पुनि नव गुणे नवके नव रहि जात॥ नवके नव रहि जात हैं तुलसी किये विचार। रमो राम इमि जगतमें नहीं द्वैत विस्तार॥ तुलसी राम सनेह करु त्यागु सकल उपचारु। जैसे घटत न अङ्क नव नवके लिखत पहारु॥ अङ्क अगुण आखर सगुण समुझउ उभय प्रकार। पोये राखे आप भल तुलसी चारु विचार॥ यहि विधिते सब राममय समुझहु सुमतिनिधान। याते सकल विरोध तजु भजु सब समुझु न आन॥ राम कामनाहीन पुनि सकलकामकरतार। याहीते परमातमा अव्यय अमल उदार॥ जो कछु चाहत सो करत हरत भरत गत भेद। काहु सुखद काहू दुखद जानत हैं बुध वेद॥ सन्त कमल मधुमास कर तुलसी बरण विचार। जग सरवर तर भरण कर

जानहु जलदातार॥ एक सृष्टिमहँ जाहि विधि प्रकट तीनि तर भेद। सात्त्विक राजस तम सहित जानत हैं बुध वेद॥ ताबिधि रघुबर नाम कहँ वर्त्तमान गुण तीन। चन्द्र भान अपि अमल विधि हरि हर कहहिं प्रबीन॥ अनल रकार अकार रवि जानु मकार मयङ्क। हरी अकार रकार विधि मन महेश निःशङ्क॥ बनन ज्ञानकहँ दहन कर अनल प्रचण्ड रकार। हरि अकार हर मोह तम तुलसी कहहिं विचार॥ त्रिविध ताप हर शशि सतर जानहु परम मकार। विधि हरि हर गुण तीनिको तुलसी नाम अधार॥ भानु कृशानु मयङ्कको कारण रघुबर नाम। विधि हरि शम्भु शिरोमणी प्रणत सकल सुखधाम॥ अगुण अनूपम सगुणनिधि तुलसी जानत राम। करता सकल जगत्तको भरता सब मन काम॥ छत्र मुकुट सम विद्धिथल तुलसी युगल हलन्त। सकल वरण शिरपर रहत महिमा अमल अनन्त॥ रामानुज सदगुण विमल श्याम राम अनुहार। भरता भरत सो जगतको तुलसी लसत अकार॥ राजत राजसतानु जब वर धरणी धर धीर। विधि विहरत अति आशु करि तुलसी जनगण पीर॥ हरण करण सङ्कट सतर समर धीर बलधाम। मा महेश अरिदवनवर लषण अनुज अरि काम॥ राम सदा सम शील घर सुखसागर परधाम। अज कारण अद्वैत गित समतर पद अभिराम॥ होनहार सहजान सब बिभव बीच नहिं होत। गगन गिरह करिबो कबै तुलसी पढ़त कपोत॥ तुलसी होत सिखेन हित तन गुण दूषणधाम। भषण सिखिन कवने कह्यो प्रकट विलोकहु काम॥ गिरत अण्ड सम्पुट अरुण जलज पत्त अनयास। अललसुवन उपदेश केहि जात सुउलटि अकास॥ विविध चित्र जल पत्र बिच अधिक नून सम सूर। कब कौने तुलसी

रचे केहि विधि पच्छ मयूर॥ काकसुता गृह ना करै यह अचरजु बड़वाय। तुलसी कहि उपदेश सुनि जनित पिता घर जाय॥ सुपथ कुपथ कीन्हे जानत स्व स्वभाव अनुसार। तुलसी सिखवत नाहिं शिशु मूषकहन न मजार॥ तुलसी जानत है सकल चेतन मिलत अचेत। कीट जात उड़ि तिय निकट विनहिं पढ़े रति देत॥ होनहार सब आपुते वृथा शोच कर जौन। कच्छ श्टङ्ग तुलसी मृगन कहहु उमेठत कौन॥ सुख चाहत सुखमें बसत है सुखरूप विशाल। सन्तत जा विधि मानसर कवहुं न तजत मराल॥ नीति प्रीति यश अयश गति सबकहँ शुभ पहिचान। बस्ती हस्ती हस्तिनी देत न पति रति दान॥ तुलसी अपने दुखदते को कहु रहत अजान। कौश कुन्त अङ्कुर बनहिं उपजत करत निदान॥ यथा धरणि सब बीजमें नखत अकाश निवास। तथा राम सब धर्ममय जानत तुलसीदास॥ पुहुमी पानी पावकहु पवनहु माहँ समात। ता कहँ जानत राम अपि बिनु गुरु किमि लखि जात॥ अगुण ब्रह्म तुलसी सोई सगुण विलोकत सोइ। दुख सुख नाना भांतिको तेहि विरोधते होइ॥ स्वर यथा गया जीति अरि पलटि आव चलि गेह। तिमि गति जानहि रामकी तुलसी सन्त सनेह॥ परमातमपद राम पुनि तीजे सन्त सुजान। जे जगमहँ विरचहिं धरे देह विगत अभिमान॥ चौथो संज्ञा जीवकी सदा रहत रत काम। ब्रह्मणसेतन रामपद निशि वासर बशवाम॥ सुख पाये हरषत हँसत खीझत लहे' विषाद। प्रकटत दुरत निरय परत केवल रत विषखाद॥ नाना विधिकी कल्पना नाना विधिको सोग। सूचमको अस्थूल तन कवहुं तजत नहिं रोग॥ जैसे कुष्ठीको सदा गलित रहत दोउ देह। बिन्दहुको गति ते-

सिये अन्तरहू गति एह॥ त्रिधा देह गति एक विधि कबहूँ नागति आन। विविध कष्ट पावत सदा निरखहिं सन्त सुजान॥ रामहिं जाने सन्तवर सन्तहि राम प्रमान। सन्तन केवल राम प्रभु रामहिं सन्त न आन॥ ताते सन्त दयाल वर देहि राम धन रीति। तुलसी यह जिय जानिकै करिअत हठि अति प्रीति॥ तुलसी सन्त सुअम्बतरु फूलि फरहिं पर-हेतु। इतते वै पाहन हनैं उतते वै फल देतु॥ दुख सुख दोनों एकसम सन्तनके मनमाहिं। मेरु उदधि गति भकुर जिमि भार भीजिबो नाहिं॥ तुलसी राम सुजानकी राम जनावे सोइ। रामहिं जाने रामजन आन कबहुँ ना होइ॥ सो गुरु राम सुजासु सम नहीं विषमता लेश। ताकी कृपा कटाच्छ-ते रहे न कठिन कलेश॥ गुरुकहँ तब समझै सुनै निर्ज कर-तबकर भोग। कह तब गुरु कर तब करे मिटै सकल भव-सोग॥ शरणागत तेहि रामकै जिन्ह हियधौ सियरूप। जा पद पाये पाइये आनँद पद उपदेश। संशय शमन नशाय सब पावे पुनि न कलेश॥ मेधा सीता सम समुझ गुरु विवेक सम राम। तुलसी सिय सम सो सदा भयो विगत मग वाम॥ आदि मध्य अवसान गति तुलसी एक समान। तेई सन्त सरूप शुभ जे अनीत गति आन॥ एई शुद्ध उपासना परा-भक्तिकी रीति। तुलसी यहि मग पगु धरे रहे रामपद प्रीति॥ तुलसी बिन गुरुदेवके किमि जाने कछु कोय। जहँते जो आयो सो है जाय जहाँ है सोय॥ अपगत ये सोई अवनि सो पुनि प्रकट पताल। कहीं जनम अपि मरणमपि समुझहि सुम-तिरसाल॥ सङ्ग दोषतते भेद अस मधु मदिरा मकरन्द। गुरु गमते देखहिं प्रकट पूरण परमानन्द॥ डावर सागर कूपगत भेद दिखाई देत। है एकै दूजे नहीं द्वैत आनकै हेत॥ गुण-

गत नाना भांति तेहि प्रकटत कालहि पाय। जान जाय गुरु ज्ञानते बिन जाने भरमाय॥ तुलसी तरु फूलत फलत जा विधि कालहि पाय। तैसेही गुण दोषते प्रकटत समय सुभाय॥ दोषहु गुणको रीति यह जानु अनल गति देखि। तुलसी जानत सो सदा जेहि विवेक सुविशेखि॥ गुरुते आवत ज्ञान उर नाशत सकल विकार। यथा निलय गति दीपके मिटत सकल अँधियार॥ यद्यपि अवनि अनेक सुख तोय तासु रस ताल। सन्तत तुलसी मानसर तदपि न तजहि मराल॥ तुलसी तोरत तीर तरु मानस जहँ सविडार, विगत नलिनि अलि मलिन जल सर सरिहू बढ़ि आर॥ जो जल जीवन जगत को परसत पावन जौन। तुलसी सो नीचे ढरत ताहि निवारत कोन॥ जो करता है करम को सो भोगत नहिं आन। बत्रनहार लुनि है सोई देनो लहै निदान॥ रावण रावणको हन्यो दोष रामकहँ नाहिं। निज हित अनहित देखु किन तुलसी आपहिमाहिं॥ सुमिरु राम भजु रामपद देखु राम सुनु राम। तुलसी समुझहु रामकहँ अहनिशि इह तव काम॥ रज अप अनल अनिल नभ जड़ जानत सब कोइ। इह चेतन्य सदा समुझ काजरत दुख होइ॥ निजकृत बिलसत सो सदा बिन पाये उपदेश। गुरुपगु पाय सुमग धरै तुलसी हरै कलेश॥ सलिल शुक्र शोणित समुझ पल अरु अस्थि समेत। बाल कुमार युवा जरा है सुसमुझ कर चेत॥ ऐसिहि गति अवसानकी तुलसी जानत हेत। ताते यह गति जानि जिय अबिरल हरि चित चेत॥ जानै रामस्वरूप जब तब पावै पद सन्त। जन्म मरण पदते रहित सुखमा अमल अनन्त॥ दुखदायक जाने भले सुखदायक भजि राम। अब हमको संसारको सब विधि पूरणकाम॥ काहुहि मदको

पान करि आपुहि होत अचेत। तुलसी बिबिध प्रकारको दुख•उतपति यहि हेत॥ जासों करत विरोध हठि कहु तुलसी को आन। सोत गमन न आन तव नाहक होसि मलान॥ चाहसि सुख जेहि मारिके सो तो मारि न जाय। कौन लाभ विषते बर्दलि ते तुलसी विष खाय॥ कोह द्रोह अघमूल है जानत को कहु नाहि। दया धर्म्म कारण समुझि को दुख पावत ताहि॥ बनी बनायो है सदा समुझ रहित नहिं शूल। अरुण वरण केहि कामको बास बिनाको फूल॥

इति द्वितीयः सर्ग्गः॥

जनकसुता दशयानसुत उरग ईश अमजौरि। तुलसिदास दशपद परखि भवसागर गयो पौरि॥ तुलसी तेरो रोग खर तात मात गुरुदेव। तात जितोहौं उचित अब रुचित आन पद सेव। तर्क विशेषि निषेध पति उर मानसु सुपुनीत। बसत मरालन रहित करि तेहि भजु पलटि विनीत॥ शक्रादिहि कल देहु इक अन्त सहित सुखधाम। दे कमला कल अन्तको मध्य सकल सुखदाम॥ बीज धनञ्जय रवि सहित तुलसी तथा मयङ्क। प्रकट तहां नहिं तम तमो समचित रहत अशङ्क॥ रञ्जन कानन कोकनद बंश बिमल अवतंस। गञ्जन पुरहुत अरि सदल जगहित मानस हंस॥ जगते रहु छत्तीस है रामचरण छत्तीन। तुलसी देखु बिचारि हिय है यह मतो प्रवीन॥ कन्दिन दून नछत्र हनि गनी अनुज तेहि कीन्ह। जेहि हरि कर मनि मान हनि तुलसी तेहि पद लीन्ह॥ शिला आयु मोचक वरण हरण सकल जञ्जाल। भरण करण सुख सिद्धितर तुलसी परम कृपाल॥ मरण बिपति हर धर धरम धराधरण बलधाम। भरण तासु तुलसी चहत बरण अखिल अभिराम॥ विहग

बीच रैयत वितय पति पति तुलसी तोर। तासु बिमुख सुख अति विषम सपनेहु होत न भोर॥ द्वितिय कोल राजिव प्रथम वाहु न निश्चय साहि। आदि एक कल दे भजहु वेद विदित गुण नाहि॥ बसत जहां राघव जलज तेहि मिति गोजहि सङ्ग। भजु तुलसी तेहि अरि सुपद करि उर प्रेम अभङ्ग॥ भजहु तरणिअरि आदिकहँ तुलसी आत्मज अन्त पञ्चानन लहि पद्म मधि गहे विमल मन सन्त॥ बनिता शैल सुतासकी तासु जनमको ठाम। तेहि भजु तुलसीदास हित प्रणत सकल सुखधाम॥ भजु पतङ्गसुत आदिकहँ मृत्युञ्जय अरि अन्तु। तुलसी पुहकर यज्ञकर वरण पाँसु-पिच्छन्तु॥ उलटे तासो तासु पति सो हजार मन सत्य॥ द्वितिय तृतिय हर कास नहिं भजु तेहि तुलसीदास। काका-सन आसन किये सासन लहे उपास॥ आदि द्वितिय अव-तारकहँ भजु तुलसी नृप अन्त। कमल प्रथम अरु मध्य सह वेद विदित मत सन्त॥ जेहि न गन्यो कछु मानसहु सुरपति अरि भो आस। तेहि पद शुचिता अवधि भव तेहि भजु तुलसीदास॥ नैनकरण गुणधरण वर तावर वरण विचार। चरण सतर तुलसी चहसि उवरन भरणअधार॥ भजु हरि आदिहि बाटिका भरिता राजिव अन्त। करिता पद विश्वास भव सरिता तरसि तुरन्त॥ जड़ मोहन वरणादि-कहँ सह चञ्चल चित चेत। भजु तुलसी संसार अहि नहि गहि करत अचेत॥ मरण अधिप वारण वरण दूसर अन्त अगार। तुलसी द्रुम सह रागधर तारण तरण अधार॥ ज्यों उरविज चाहसि भटित तो करि घटित उपाय। सुमन सवर वर अरि-चरण सेवन सरल सुभाय॥ द्वितिय पयोधर परमधन बाग अन्त युत सोथ। भजु तुलसी संसार हित याते अधिक न

कोय॥ पति पयोधि पावत पवन तुलसी करहु विचार। आदि द्वितिय अरु अन्तयुत तामत तव निरधार॥ हंस कपट रस सहित गुण अन्त आदि प्रथमन्त। भजु तुलसी तजि बाम· गति जेहि पद रत भगवन्त॥ कना समुझि कवरण हरहु अन्त आदि युत तार। श्रीकर तमहर वरण वर तुलसी सरत उबार॥ अङ्कदशारस आदि युत पाण्डुसूनु सह अन्त। जानि सुवन सेवक सतर करि है कृपा परन्त॥ झटिति सखाहि विचारि हिय आदि वरण हर एक। अन्त प्रथम स्वर दे भनहु जा उर तत्त्व विवेक॥ आदि चन्द्र चञ्चल सहित भजु तुलसी तजु काम। अघगञ्जन रञ्जनसुजन भवभञ्जन सुखधाम॥ विगति देह तनु जासु पति पद रति सहित सनेह। यदि अति मति चाहसि सुगति तदि तुलसी करु प्रेम॥ करता शुचि सुरसरिसुता शशि सारँग महि जान। आदि अन्तसह प्रथम युत तुलसी समुझु न आन॥ गिरिजागति कल आदि इक हरि नचत्र युधि जान। आदि अन्त भजु अन्त पुनि तुलसी शुचि मन मान॥ ऋतुपतिपद पुनि पदि-क युत प्रथम आदि पुर लेहु। अन्त हरण पद द्वितियमहँ मध्य वरण नह नेहु॥ बाहन शेष सुमधु परव भरत नगर युत जान। हरि भरि सरित विपर्य्य करि आदि मध्य अघसान॥ तुलसी उडुगणको वरण बनज सहित दोउ अन्त। ताकहँ भजु संशयशमन रहित एक कल अन्त॥ वारिज वारिज वरण वर वरणत तुलसीदास। आदि आदि भजु आदि पद पाये परम प्रकाश॥ भजु तुलसी कुलिशान्तकहँ सह अगार तजि काम। सुखसागर नागर ललित बली अली परधाम॥ चञ्चल सहि-तरु चचला अन्त अन्त युत ज्ञान। सन्त शास्त्र सम्मत समुझि तुलसी करु परमान॥ आदि बसन्त इकार दे आशय ता-

सु विचार। तुलसी तासु शरण परे कासु न भयो उबार॥ धरा धराधर बरण युग शरण हरण भवभार। करन सतर तर परम पद तुलसी परमाधार॥ बरन धनञ्जय सूनुपति चरण शरण रति नाहि। तुलसी जगवञ्चक विहठि किये विधाता ताहि॥ तुलसी रजनी पूर्णिमा हार सहित लखि लेहु। आदि अन्त युत जानि कहि तुलतरसनलसनेहु॥ भानु गोत्र तिमि तासु पति कारण अति हित जाहि। ज्ञान सुगति युत सुखसदन तुलसी मानत ताहि॥ भजु तुलसी औघादिकहँ सहित तत्त्व युत अन्त। भव आयुर्जय जासुबल मन चल अचल करन्त॥ देत कहा नृप काजपर लेत कहा दूत राज। अन्त आदि युत सहित भजु जो चाहसि शुभ काज॥ चन्द्रवर्ण भजु गुण सहित समुझि अन्त अनुराग। तुलसी जो यह बन परै तो तव पूरण भाग॥ जिनकै हरि बाहन नहीं दधिसुत सुत जेहि नाहि। तुलसीते नर तुच्छ हैं विना समीर उड़ाहिं॥ रवि चञ्चल अरु ब्रह्म द्रव बीच सुबास विचारि। तुलसिदास आसन करै अवनिसुता उर धारि॥ बन बनितादृगकोपमा युत करु सहित विवेक। अन्त आदि तुलसी भजहु परिहरि मत कर टेक॥ उर्वी अन्तहु आदि युत कुल शोभी कमलादि। कै विपर्य्यं ऐसेहि भजहु तुलसी शमन विषाद॥ तौ तोहिकहं सब कोउ सुखद करहि कहा तव पाँच। हरव तृतिय वारिज वरण तजव लीन सुनु साँच॥ तजहु सदाशुभ आश्रअरि भजु सुमनस अरिकाल। सजु मतईश अवन्तिका तुलसी विमल विशाल॥ एतवन्त बरवरणयुग सेत जगत सब जान। चेत सहित सुमिरण करत हरत सकल अवखान॥ मैत्रीवरणायकारको सहसर आदि विचारि। पञ्चवर्ग गहियुत सहित तुलसी ताहि सँभारि॥ हलयम मध्य समानयुत याते अधिक न आन॥

तुलसी ताहि बिसारि शठ भरमत फिरत भुलान ॥ कौन जाति सीतासती को दुखदायक बाम । को कहिये शशिकर दुखद सुखदायक को राम ॥ को शङ्कर गुरुवागवर शिवहरको अभिमान करताको अजजगतको भरताको हरिजान ॥ सरलेय सरजीव-गुण करु तेहि दृढ़पहिचान । पञ्चवर्ग गहि युतसहित तुलसी ताहि समान ॥ होत हरष का पाय धन विपति तजे का धाम ॥ दुखदा कुमति कुनारि तर अति सुखदायक राम ॥ बीर कवन सह मदनशर धीर कवन रतराम । कवन क्रूर हरिपदबिमुख को कामी वशवाम ॥ कारण को कंजीव को खंगुण कह सब कोय । जानतको तुलसी कहत सो पुनि आवन होय ॥ तुलसी वरण बिकल्पको औचप वितिय समेत ॥ अब समुझे जड़ सरित नर समुझै साधु सचेत ॥ जासु आसु सरदेवको अरु असार हरु वाम । सकल दुखद तुलसी तजहु मध्य तासु सुखधाम ॥ चञ्चल तियभजु प्रथम हरि जो चाहसि परधाम । तुलसी कहहि सुजन सुनहु यही सयानप काम ॥ कुलिशधर्म्म युग अन्तयुत भजु तुलसी तजु काम ॥ अशुभहरण संशयशमन सकल कला गुणधाम ॥ श्रीकरको रघुनाथहर अनयश कह सब कोय । सुखदाको जानत सुमति तुलसी समतादोय ॥ वैरमूलहित हरवचन प्रेममूल उपकार । दोहा सरल सनेहमें तुलसी करै विचार ॥ प्राग कवन गुरु लघु जगत तुलसी और न आन । श्रेष्ठाको हरिभक्तिसम को लघु लोभ समान ॥ चरण द्वितिय नाशक निरय तुलसी अन्तरसार । भजहु सकल श्रीकरसदन जनपालक खलसार ॥ चपश्रेय सस्वर सहित यमयुत दुखद न आन । तुलसी हलयुतते कुशल अन्तिकार सहजान ॥ तुलसी यमगण बोध बिन कहु किमि मिटै कलेश । ताते सदगुरुशरण गह जाते पद-उपदेश ॥ भगण जगण कासों करसि रामशयन नहिं कोय ।

तुलसी पतिपहिचान बिन कोउ तुलकबहुँलहोय॥ तुलसी तगण-विहीन नर सदा नगणके बीच। तिनहिं जगण कैसे लहै परि सगणके बीच॥ इन्द्रमणि सुरदेव ऋषि रुक्मिणिपति शुभ जान। भोजनदुहिता काक अलि आनँद अशुभ समान॥ को हित सन्त अहित कुटिल नाशकको हित लोभ। पोषक तोषक दुखद अरि शोषक तुलसी चोभ॥ सदा नगण पद प्रीति यहि जानु नगण सम ताहि। जगण ताहि जययुत रहत तुलसी संशय नाहि॥ भगण भक्ति करु भरम तजि तगण सगण विधि होय। सगण सुभाय समुझि तजो भजे न दूषण कोय॥ श्रीगज आसनजतजू बिहरत तीर सुधीर। यह्न पाय मैलाणपद राजत श्रीरघुवीर॥ बाणयुतजू तट निकट विहरत रामसुजान। तुलसी करकमलन ललित लसत शरासन बान॥ मृदुमेचक शिरुह रुचिर शीशतिलक भ्रू बङ्क। धनुशर गहि जनु तहितयुत तुलसी लसत मयङ्क॥ हंस कमल बिच वरणयुत तुलसी अतिप्रिय जाहि। तीनलोकमहँ जो भजे लहै तासु फल ताहि॥ आदि महै अन्तहु महै मध्य रहै तेहिजान। अनजाने जड़जीव सब समुझे सन्तसुजान॥ आदि रहै मध्ये रहै अन्त दहै सो बात। रामबिमुखके होत है रामबिमुखते जात॥ ललित चरण कटि कर ललित लसत ललित बनमाल। ललित-चिबुक द्विज अधरसह लोचन ललित विशाल॥ भरणहरणअर्पै-अमल सहित विकल्पविचार। कह तुलसी मति अनुहरत दोहा अर्थ अपार॥ वशिष्ठादिलङ्कारमहँ सङ्केतादि सुरीति॥ कहे बहुरि आगे कहब समुझब सुमतिविनीति॥ कोष अलङ्कृत सन्धि गति मैत्रीवरण विचार। हरण भरण सुविभक्ति भल कविहि अर्थ निरधार॥ देशकाल करताकरम बुधि विद्यागतिहीन। ते सुरतरु तर दारदी सुरसरितीर मलीन॥ देशकाल गतिहीन जे

करताकर मनज्ञान। तेपिमर्थ मगु पगुधरहिं तुलसी ध्यान समान अधिकारी सब वोसरी भलोजानिबो मन्द। सुधासदन बसुवारहो चौथो अथवाचन्द॥ नरवर नभ सरवर सलिल विनय बनज विज्ञान। सुमति शुक्तिका शारदा स्वातो कहहिं सुजान॥ शम दम समता दीनता दानदयादिक गीति। दोषदुरित हरदर दरउ रवरबिविमल विनीति॥ धरमधुरीण सुधीरधर धारनवरपरपीर। धराधरा धरसम अचल बचन न बिचल सुधीर॥ चौंतिसके प्रस्तारमैं अर्थभेद परमान। कहहु सुजन तुलसी कहहिं या बिधिते पहिचान॥ वेद बिषम कवरण सतर सुतर रामको रीति। तुलसी भरत न भरिहरत भूलि हरहु जनि प्रीति॥ बनते गुणकहँ जानिये ताते दृगदिग तीन। तुलसी यह जिय समुझिकरि जगजित सत्त प्रबीन॥ चन्द्रअनल नहिं है कहूँ झूठो बिना विवेक। तुलसीते नर समुझि हैं जिनहिं ज्ञानरस एक॥ सतसैया तुलसी सतर तमहर परपर देत। तरित अविद्या जनदुरित वरतुलसम करि लेत॥

इति तृतीयः सर्गः ३॥

त्रिविध भौतिको शब्द वर विखटन लट परसान। कारण अविरल अल पियत तुलसी अविध भुलान॥ दिगभ्रम जा विध होत है कौन भुलावत ताहि। जानि परत गुरु ज्ञानते सब जग संशय माहि॥ कारण चारि विचारु वर वरणन अपर न आन। सदा सोउ गुण दोषमैं लखि न परत गुण ज्ञान॥ इह करतब सब ताहिको यहिते यह परमान। तुलसी मरम न पाइ हो बिन सदगुरु वरदान॥ दिगभ्रम कारण चार ते जानहिं सन्त सुजान। ते कैसे लखि पाइ हैं जे वहि विषम भुलान॥ सुख दुख कारणसा भयो रसनाको सुत वीर।

तुलसी सो तब लखि परै करै कृपा वरधीर॥ अपने खोदे कूपमहँ गिरे यथा दुख होइ। तुलसी सुखद समुझि हिये रचत जगत सब कोय॥ ता विधिते अपनो विभव दुख सुख दे करतार। तुलसी कोउ कोउ सन्त बर कीन्हे विरचि विचार॥ रसनाहीके सुत उपर करत करनतर प्रीति। तेहि पाछे जग सब लगे समुझ न रीति अरीति॥ माया मन जिव ईश भणि ब्रह्मा विष्णु महेश। सुर देवी औ ब्रह्मलौं रसना सुत उपदेश॥ करणधार वारिधि अगम को गम करै अपार। जन तुलसी सतसङ्गबल पाये विशद विचार॥ गहि सुवेल बिरले समुझि बहि गय अपर हजार। कोटिन बूड़े खबरि नहिं तुलसी कहहिं विचार॥ अब न सुनत देखत नयन तुलत न विविध विरोध। कहहु कही केहि मानिये केहि विधि करिय प्रबोध॥ श्रवणात्मक ध्वन्यात्मक वरणात्मक विधि तीन। त्रिविध शब्द अनुभव अगम तुलसी कहहिं प्रबीन॥ कहत सुनत आदिहि वरण देखत वरणविहीन। दृष्टिमान चर अचरगण एकहि एकन लीन॥ पञ्च भेद चरगण विपुल तुलसी कहहिं विचारि। नर पशु स्वेदज खगज खग कृमि बुध मत निरधारि॥ अति विरोध तिनमहँ प्रचल प्रकट परत पहिचान। अस्थावर गति अपर नहिं तुलसी कहहिं प्रमान॥ रोम रोम ब्रह्माण्ड बहु देखत तुलसीदास। बिन देखे कैसे कोऊ सुनि माने विश्वास॥ वेद कहत जहँलगि जगत तेहिते अलग न आन। तेहि अधार व्यवहरत लखु तुलसी परम प्रमान॥ सरषप सूझत जासुकहँ ताहि सुमेरु असूझ। कहेउ न समुझत सो अबुध तुलसी विगत विसूझ॥ कहत अवर समुझत अवर गहत तजत कछु और। कहेउ सुनै समुझत नहीं तुलसी अति मतिबौर॥ देखो करै अदेख इव अनदेखो विश्वास। कठिन प्रबलता

मोहको जलकहँ परम पियास॥ सोई सेमर सोइ सुवा सेवत पाइ बसन्त। तुलसी महिमा मोहकी विदित बखानत सन्त॥ सुन्यो सबन देख्यो नयन संशय शमन समान। तुलसी समता असमभत्र कहत आनकहँ आन॥ बसहा भव अरि हित अहित सोपि न ससुझत हीन। तुलसी दीन मलीनमति मानत परम प्रवीन॥ भटकत पर अद्वैतता अटकत ज्ञान गुमान। सटकत वितरनते विहटि फटकत तिषु अभिमान॥ जो चाहत तेहि बिनु दुखित सुखित रहित तेहि होइ। तुलसी सो अतिशय अगम सुगम रामते सोइ॥ मात पिता निज बालकहि करहिं इष्ट उपदेश। सुनि माने विधि आप जेहि निज शिर सहे कलेश॥ सबसों भलो मनाइबो भलो होनकी आस। करत गगनके गेडुआ सो शठ तुलसीदास॥ बिलिमिषु देखत देवता करणी समता देव। मुये मार अविचाररत स्वारथ सावक एव॥ त्रिनहिं बीज तरु एक भव शाखा दल फल फूल। को वरणै अतिशय अमित सब विधि अकल अतूल॥ शुक पिक मुनिगण बुध विबुध फल आश्रित अति दीन। तुलसी ते सब विरदहित सो तरु तासु अधीन॥ को नहिं सेवत आय भव को न सेय पछताय। तुलसी बादहि पचत है आपहि आप नशाय॥ कहत विविध फल विमल तेहि वहत न एक प्रमान। भरम प्रतिष्ठा मानि मन तुलसी कथत भुलान॥ मृगजल घट भरि विविध विधि सींचत नभतरुमूल। तुलसी मन हरषित रहत विनहिं लहे फल फूल॥ सोपि कहहिं हमकहँ लख्यो नभतरुको फल फूल। ते तुलसी तिनते बिमल सुनि मानहिं मुद मूल॥ तेपि तिन्हैं याचहिं भिनय करि करि बार हजार। तुलसी गाडरकी ढरन जाने जगत विचार॥ शशि कर सग रचना किये कत शोभा सर-

सात। स्वर्ग सुमन अवसन्त खलु चाहत अचरज बात॥ तुलसी बोल न बूझई देखत देखन जोय। तिन शठके उपदेश-का करब सयाने कोय॥ जो न सुनै तेहि का कहिय कहा सुनाइय ताहि। तुलसी तेहि उपदेशही तासु सरिस मति जाहि॥ कहत सकल घट राममय तौ खोजत केहि काज। तुलसी कह इह कुमति सुनि उर आवत अति लाज॥ अलख कहहिं देखन चहहिं ऐसे परम प्रवीन। तुलसी जग उपदेशही बनि बुध अबुध मलीन॥ हहरत हारत रहित विद रहत धरे अभिमान। ते तुलसी गुरु आब नहिं कहि इतिहास पुरान॥ निज नैनन दीसत नहीं गही आँधरे बाह। कहत मोहबश तेहि अधम परम हमारे नाह॥ गगनवाटिका सींचही भरि भरि सिन्धुतरङ्ग। तुलसी मानहि मोद मन ऐसे अधम अमङ्ग। दृषद करत रचना बिहरि रङ्ग रूप सम-तूल। विहग वदन विष्ठा करे ताते भयो न तूल॥ चाह ति-हारो आपते मानन आनन आन। तुलसी करु पहिचान पति याते अधिक न आन॥ आतमबोध विचार इह तुलसी करु उपकार। कोउ कोउ रामप्रसादते पावत परमतपार॥ जहाँ तोष तहँ राम हैं राम-तोष नहिं भेद। तुलसी देखि गहत नहीं सहत विविध विधि खेद॥ गोधन गजधन बाजिधन और रतनधनखान। जब आवे सन्तोषधन सब धन धूरि समान॥ कुथि रति अटत विमूढ़ लट घट उद्घटत न ज्ञान। तुलसी रटत हटत नहीं अतिशय गति अभिमान॥ भूभुवङ्ग गत दाम भुव काम न विविध विधान। तो तन वर्त्तमान यत तत तुलसी परमान॥ भो उर सुक्ति विभव पढ़ि मनगत प्रकट लखात। मन भो उर अति सुक्तिते बिलग बिजानब तात॥ रामचरण पहिचान बिनु मिटो न मनकी दौर।

जन्म गँवाये बादही रटत पराये पौर॥ सुनै वरण मानै वरण वरण बिलग नहिं ज्ञान। तुलसी सुगुरुप्रसाद बल परै वरण पहिंचान॥ बिटप बेलिगण बागके मालाकार न जान। तुलसी ता विधि विद बिना करता राम भुलान॥ करतव ही सो कर्म है कहँ तुलसी परमान। करणहार करतारसो भोगे कर्म निदान॥ तुलसी लट पदते मटक अटक अपित नहिं ज्ञान। ताते गुरु उपदेश बिनु भरमत फिरत भुलान॥ ज्यों बरदा बनिजारके फिरत घनेरे देश। खाँड़ भरे भुस खात हैं बिन गुरुके उपदेश॥ बुध्वा वैरन अनथ पद अवपिन पदारथ लीन। तुलसी तेहि रासभ सरिस निज मन गणहि प्रवीन॥ कहत विविध देखे विना गहत अनेक न एक। ते तुलसी सोनहिं सरिस बाणी बदहिं अनेक॥ बिन पाये परतीत अति करत यथारथ हेत। तुलसी अबुध अकाश इव भरि भरि मूठी लेत॥ बसन बारि बाँधत बिहठि तुलसी कौन विचार। हानि लाभ विधि वाध बिनु होत नहीं निरधार॥ काम क्रोध मद लोभकी जबलगि मनमें खान। का पण्डित का मूरख दोनों एक समान॥ इत कुलकी करणी तजे उत न भजे भगवान। तुलसी अधवरके भये ज्यों बधूरको पान॥ कौर सरिस बाणी पढ़त चाखन चाहत खाँड़। मन राखत वैरागमहँ घरमों राखत राँड़॥ रामचरण परचै नहीं बिन साधन पद नेह। मूँड़ मुड़ाये बादहीं भाँड़ भये तजि गेह॥ काह भयो बन बन फिरे जो बनि आयो नाहिं। बनते बनते बनि गयो तुलसी घरहीमाहिं॥ जो गति जानै वरणकी तन गति सो अनुमान। बरण बिन्दु कारण यथा तथा जानु नहिं आन॥ वरण योग भर नाम जग जानु भरमको मूल। तुलसी करता है तुही जानु मानु जनि भूल॥ नाम जगत सम समुझ जग

वस्तु न करि चित चैन। विन्द गये जिमि गैनते रहत ऐनको ऐन॥ आपुहि ऐन बिचारु विधि सिद्धि बिमल गति मान॥ आन बासना बिंदुसम तुलसी परम प्रमान॥ धन धन कहे न होत कोउ समुझि देखु धनमान। होत धनिक तुलसी कहत दुखित न रहत जहान॥ हिमको मूरतिके हिये लगत नीरको प्यास। लगत शब्द गुरु तरनिकर सोमैं रही न आस जाके उरवर वासना भई भाष कछु आन। तुलसी ताहि विड-म्बना कहि विधि कथहि प्रमान॥ रुजत न भर परचै बिना भेषज करि किमि कोय। जान परै भेषज करै सहज नाश रुज होय॥ मानस व्याध कुचाह तव सदगुरु वैद समान। जासु वचन अलवल अवल होत सकल रुज हान॥ रुचि बाढ़े सत-सङ्गमहँ नीति चुधा अधिकाय। होत ज्ञानबल पीन अल वृजिन विपति मिटि जाय॥ शुक्लपक्ष शशि स्वच्छमी कृष्णा-पक्ष द्युतिहीन। बढ़ब घटब विधि भाँति बिचि तुलसी कह-हिं प्रवीन॥ सतसङ्गति सितपच्छ सम असित असन्त प्रसङ्ग। जानु आपकहँ चन्द्र सम तुलसी बदन अभङ्ग॥ तीरथपति सतसङ्ग सम भक्ति देवसरि जान। विधि उलटी गति रामकी तरणिसुता अनुमान॥ बर मेधा मानहु गिरा धीर धर्म्म न-ग्रोध। मिलन बिबेणी मनहरणि तुलसी तजहु विरोध॥ समझब सब मज्जन विशद मल अनीत गद धोय। अवश मिलन संशय नहीं सहज रामपद होय॥ क्षेम विमल बारा-णसी सुरअपगा सम भक्ति। ज्ञानबिश्वेश्वर अति विशद लसत दया सह शक्ति॥ बसत क्षेम गृह जासु मन बाराणसी न दूरि। बिलसित सुरसरि भक्ति जहँ तुलसी नय कृत भूरि॥ सित काशी मगहर असित लोभ मोह मद काम। हानि लाभ तुलसी समुझि बास करहु वसुयाम॥ गये पलटि आवें

नहीं है सो करु पहिचान। आजु जेइ सो काल है तुलसी भरम न मान॥ बर्त्तमान आधीन दोउ भावी भूत विचार। तुलसी संशय मनन करु जो है सो निरधार॥ मानस उर बर मम मधुर रामसुयश शुचिनीर। उठेउ बृजिन बुधि मल भई बुधि नहिं अगम अधीर॥ अलङ्कार कवि रीति युत भूषण दूषण रीति। बारिजात बरणत विविध तुलसी विमल बिनीति॥ विने विचार सुहिर्द्दता सो पराग रस गन्ध। कामादिक तेहि सरल सत तुलसी घाट प्रबन्ध॥ प्रेम उमंग कवितावली चली सरित शुचिधार। राम बराबरि मिलन हित तुलसी हरष अपार॥ तरल तरङ्ग सुछन्द वर हरत द्वैत तरु मूल। वैदिक लौकिक विधि बिमल लसत बिशदवर कूल॥ सन्तसभा विमला नगरि सिगरि सुमङ्गलखानि। तुलसी उर सुरसरिसुता लसत सुयश अनुमानि॥ मुक्त मुमुक्षू र विषद श्रोता त्रिविध प्रकार। ग्राम नगर पुरयुग सुतट तुलसी कहहिं बिचार॥ बाराणसीविराग नहिं शैलसुता मन होय। तिमि अवधहि सरयु न तजे कहत सुकवि सब कोय॥ कहब सुनब समुझब पुनः सुनि समुझायब आन। अमहर घाट प्रबन्धवर तुलसी परम प्रमान॥

इति चतुर्थःसर्गः॥ ४॥

यतन अनूपम जानु वर सकल कला गुणधाम॥ अविनाशी अब यह अमल भो यह तनु धरि राम॥ सदा प्रकाश सरूपवर अस्त न अपर न आन। अप्रमेय अद्वैत अज याते दुरत न ज्ञान॥ जानहिं हंसा रसमकहँ तुलसी सन्त न आन। जाकी कृपा कटाक्षते पाये पदनिर्वान॥ तजत सलिल अपि पुनि गहत घटत बढ़त नहिं रीति। तुलसी यह गति उर निरखि करिय रामपद-

प्रीति । चुम्बक इरहन सेति जिम सन्तन हरि सुखधाम । जान तिरीच्छर सम सफरि तुलसी जानत राम ॥ भरत हरत दरशंत सबहि पुनि अदरश सबकाहु ॥ तुलसी सुगुरु प्रसादवर होत परमपद लाहु ।. यथा प्रत्यच्छ सरूप बहु जानत है सब कोय ॥ तथाहि लै गतिको लखब असमञ्जस अति सोय ॥ यथा सकल अपि जात अप रविमण्डलके माहिं । मिलत तथा जिव रामपद होत तहांलै नाहिं ॥ कर्म्मकोश सँग लै गयो तुलसी अपनी वानि । जहां जाय बिलसे तहां परे क ा पहिचानि ॥ ज्यों धरणीमहँ हेतु सब रहत यथा धरि देह । त्यों तुलसी लै राममहँ मिलत कबहुं नहिं एह ॥ शोषक पोषक समुझ शुचि राम प्रकाशसरू प । यथा तथा बिन देखिये जिमि आदरश अनूप ॥ कर्म मिटाये मिटत नहिं तुलसी किये बिचार । करतब होकै फेर है या बिधि सार अधार ॥ एक किये हो दूसरो बहुरि तीसरो अङ्ग । तुलसी कैसेहु ना नशै चतिशय कर्म तरङ्ग ॥ इन दोउनतै रहत भो कोउ न राम तजि आन । तुलसी यह गति जानिहै कोउकोउ सन्तसुजान ॥ सन्तनको लै अमिसदन समुझहि सुगति प्रवीन । कर्मविपर्यय कबहुँ नहिं सदा रामरसलीन । सदा एकरस सन्त सिय निश्चय निशिकर जान ॥ रामदिवाकर दुखहरण तुलसी शीलनिधान ॥ सन्तनकी गति उरविजा जानहु शशि परनाम । रमित रहत रसमें सदा तुलसी रति नहिं आन ॥ जातरूप जिमि अनल मिलि ललित होत तन आन ॥ सन्तशील कर सोय तिमि लसहि रामपद पाय ॥ आपहिं बाँधत आपु हठि कौन छुड़ावत ताहि ॥ सुखदायक देखत सुनत तदपि सो मानत नाहि ॥ जोन तारतै अधम गति उर्द्ध तौन गति जात । तुलसी मकरीतन्त इव कर्म न कबहुँ नशात ॥ जहां रहत तहँ सह सदा तुलसी तेरी बानि । सुधरे बिधिवश होय जब सतसङ्गति पहिचानि । रवि रजनीश घरातथा

इह अस्थिर अस्थूल। सूक्ष्म गुणको जीवकर तुलसी सो तन-भूल" आवत अपर विते यथा जात तथा रविमाहिं॥ जहँते प्रकटत हो दुरत तुलसी जानत ताहि॥ प्रकट भये देखत सकल दुरत लखत कोइ कोय। तुलसी यह अतिशय अगम बिन गुरु सुगम न होय। या जग जे नयहीन नरबरबस दुखमग-जाहि। प्रकटत दुरत महादुखी कहँलगि कहियत ताहि॥ सुखदुख मग अपने गहे मगकेहु गहत न धाय। तुलसी राम-प्रसाद बिनु सो किमि जानो जाय॥ महिते रवि रविते अवनि सपनेहु दुख कहुं नाहिं। तुलसी तबलगि दुखित अति शशिम-गु लहत न ताहिं॥ सन्तनकी गति शीतकर लेश कलेश न होय। सो सियपद सुखदा सदा जानु परमपद सोय॥ तजत अमिय शशि जानि जग तुलसी देखत रूप। गहत नहीं सबकहँ बिदित अतिशय अमल अनूप॥ शशिकर सुखद सकल जगत को तेहि जानत नाहिं। कोक कमलकर दुखदकर तदपि दुखद नहिं ताहि॥ बिन देखे समुझे सुने सोउ भी मिथ्यावाद। तुलसी गुरु गमके लखे सहजहि मिटे विषाद॥ बरषि विश्व हरषित करत हरत ताप अघप्यास। तुलसी दोष न जलदकर त्यों जड़ करत जवास॥ चन्द्र देत अमि लेत विष देखहु मनहिं बिचार। तुलसी तिमि सिय सन्तवर महिमा विशद अपार॥ रसम बिदित रवि रूप लखु शीत शीतकर जान। लसत योगयशकार भव तुलसी समझ समान॥ लेति अवनि रविअंशकहँ देति अमिथ अपसार। तुलसी सूक्षमको सदा रवि रजनीश अधार॥ भूमि भानु अस्थूलअप सकल चराचर रूप। तुलसी बिन गुरु ना लहै यह मत अमल अनूप॥ तुलसी जे लयलीन नर ते निशिकर तन-लीन। अपर सकल रविगत भये महाकष्ट अतिदीन॥ तुलसी कवनेहुँ योगते सतसङ्गति जब होय। राम मिलन संशय नहीं

कहहिं सुमति सब कोय ॥ सेवक पद सुखकर सदा दुखद सेव्य-पद जान। यथा विभीषण रावणहि तुलसी समुझ प्रमान ॥ शीत उष्णकर रूपयुग निशिदिन कर करतार। तुलसी तिन-कहँ एक नहि निरखहु करि निरधार ॥ नहिं नैनन काहू लख्यो धरत नाम सब कोय। ताते साँचो है समुझ झूँठ कबहुँ नहिं होय ॥ वेद कहत सब कोउ विदित तुलसी अमिय स्वभाव। करत पान अपि रुज हरत अविरल अमल प्रभाव ॥ गन्ध शीत अपि उष्णता सबहि विदित जग जान। महिबन अनल सुआनि लग बिन देखे परमान ॥ इनमहँ चेतन अमलअल बिलखत तुलसीदास। सो पद गुरुउपदेश सुनि सहज होत परकास ॥ यहि विधिते वर बोध इह गुरु प्रसाद कोउ पाव। हैं ते अल तिहुँ कालमहँ तुलसी सहज प्रभाव ॥ काकसुतासुत-वासुता मिलत जननि पितु धाय। आदि मध्य अवसान गत चेतन सहज सुभाय ॥ समता स्वारथहीनते होत न विशद वि-वेक ॥ तुलसी यह तिनहीं फबै जिनहिं अनेक न एक ॥ सब स्वा-रथ स्वारथ रटत तुलसी घटत न एक। ज्ञानरहित अज्ञानरत कठिन कुमनकर टेक ॥ स्वारथ सो जानहु सदा जासों त्रिपति नशाय। तुलसी गुरुउपदेश बिन सो किमि जानो जाय ॥ कारज स्वारथ हित करै कारण करै न होय। मनवा ऊपविशेषते तुलसी समझहु सोय ५० कारण कारज जानता सबकाहू पर-मान। तुलसी कारजकारजो सो तैं अपर न आन ॥ बिन करता कारज नहीं जानत हैं सब कोय। गुरुमुख श्रवण सुनत नहिं प्राप्ति कवन विधि होय ॥ करता कारण कारजहु तुलसी गुरु पर-मान। लोपत करता मोहवश ऐसो अबुध मलान ॥ अनिल सलिल विधियोगते यथा बीचि बहु होय। करत करावत नहिं कछुक करता कारण सोय ॥ चेम धरण करतार कर तुलसी

पति परधाम। सो वरतरता समन कोउ सब विधि पूरण-काम॥ करता कारण सारपद, आवै अमल अभेद। कर्म घटत अपि बढ़त हैं तुलसी जानत बेद॥ स्वेदज जवन प्रकारते आपु करै कोउ नाहि। भये प्रकट तेहिके सुनो कौन विलोकत ताहि॥ भयो विषमता कर्म महँ समता किये न होय। तुलसी समता समुझ कर सकल मान मद धोय॥ समहित सहित समस्त जग सुहृद जान सबकाहु। तुलसी यह मत धारु उर दिन प्रति अति सुख लाहु॥ यह मनमहँ निश्चय धरहु है कोउ अपर न आन। कासन करत विरोध हठि तुलसी समुझ प्रमान॥ महि जल अनल सुअनिल नभ तहाँ प्रकट तव रूप। जानि जाय वर बोधते अति शुभ अमल अनूप॥ जोपै आकसमातते उपजे बुद्धि विशाल। नातो अति छलहीन है गुरुसेवन कछु काल॥ कारज युग जानहु हिये नित्य अनित्य समान। गुरु गमते देखहि सुजन कह तुलसी परमान॥ महि मयङ्क अहिनाहको आदि ज्ञान भौ भेद। ता विधि तेई जीवकहँ होत समुझ विन खेद॥ परो फेर निज कर्म महँ भ्रम भवका यह हेत॥ तुलसी कहत सुजन सुनहु चेत न समुझ अचेत॥ नामकार दूषण नहीं तुलसी किये विचार। कर्मनकी घटना समुझि ऐसे वरण उचार॥ सुजन कुजन महि गत यथा तथा भानु शशिमाहिं। तुलसी जानत हो सुखी होत समुझ विन नाहिं॥ मातु तात भवरोति जिमि तिमि तुलसी गति तोरि। मात न तात न जानु तब है तेहि समुझ बहोरि॥ सर्व सकल तैं है सदा विश्लेषित सब ठौर। तुलसी जानहिं सुहृद जे ते अति मति शिरमौर॥ अलङ्कार घटना कनक रूप नाम गण तीन। तुलसी रामप्रसादते परखुहिं परमप्रवीन॥ एक पदारथ

त्रिविध गुण संज्ञा अगम अपार। तुलसी सुगुरुप्रसादते पाये पद निरधार॥ गन्ध न मूल उपाधि बहु भूषण तन मण जान। शोभा गुण तुलसी कहहिं समुझहिं सुमतिनिधान॥ जैसो जहाँ उपाधि तहँ घटित पदारथ रूप। तैसो तहाँ प्रभा सगन गुणगण सुम्नति अनूप॥ जातु वस्तु अस्थिर सदा मिटत मिटाये नाहिं। रूप नाम प्रकटत दृश्त समुझि विलोकहु ताहि॥ पेष रूप संज्ञा कहब गुण सुविवेक विचार। इतनोई उपदेश बर तुलसी किये बिचार॥ सदा सगुण सीता रमण सुखसागर बलधाम। जन तुलसी परखे परम पाये पद विश्राम॥ सगुण पदारथ एक नित निर्गुण अमित उपाधि। तुलसी कहहिं विशेषते समुझ सुगति सुठि साधि॥ यथा एकमहँ वेद गुण तामहँको कहु नाहि। तुलसी बर्त्तत सकल हैं समुझत कोउ कोउ ताहि॥ तुलसी जानत साधुजन उदय अस्तगत भेद। बिन जाने कैसे मिटै विविध जनन जन खेद॥ संशय शोक समूल रुज देत अमित दुख ताहि। अहि अनुगत सपने विविध चाहि परायण जाहि॥ तुलसी सांचो आप है जब लगि खुलैं न नैन। सो तबलगि जबलगि नहीं सुनै सुगुरुवर बैन॥ पूरण परमारथ दरश परशत जौलगि आश। तौलगि खन उत्थान नद जबलगि जल न प्रकाश॥ तबलगि हमते सब बड़ो जबलगि है कछु चाह। चाहरहित कह को अधिक पाय परमपद थाह॥ कारण करता है अचल अपि अनादि अजरूप। ताते कारज विपुलतर तुलसी अमल अनूप॥ करता जानि न परत है बिन गुरुवरपरसाद। तुलसी निज सुख विधि रहित केहि विधि मिटै विषाद॥ मृण्मय घट जानत जगत बिन कुलाल नहिं होय। तिमि तुलसी करता रहित कर्म करै कहुँ कोय॥ ताते करता ज्ञान कर जाते

कर्म प्रधान। तुलसी ना लखि पाइ हो किये अमित अनु-मानँ॥ अनुमान साचो रहित होत नहीं परमान। कह तुलसी प्रत्यक्ष जो सो कहु अपरको आन॥ मिति कारण करता सहित कारज किये अनेक। जौ करता जाने नहीं तौ कहु कवन विवेक॥ स्वर्णकार करता कनक कारण प्रकट लखाय। अल-ङ्कार कारज सुखद गुण शोभा सरसाय॥ चामीकर भूषण अमित करता कह तब भेद। तुलसी जे गुरु गमरहित ताहि रमित अति खेद॥ तन निमित्त जहँ जो भयो तहां सोइ पर-मान। जिन जाने माने तहां तुलसी कहहि सुजान॥ मृण्मय भाजन विविध बिधि करता मन भव रूप। तुलसी जानेते सुख-द गुरु गम ज्ञान अनूप॥ सब देखत मृण भाज नहिं कोइ कोइ लखत कुलाल। जाके मनके रूप वह भाजन विलखु बिशाल॥ एके रूप कुलालको माटी एक अनूप। भाजन अमित विशाल लघु सो करता मन रूप॥ जहां रहत वरतत तहां तुलसी नित्य स्वरूप। भूत न भावी ताहि कह अतिशय अमल अनूप॥ श्वास समीर प्रत्यक्ष अप स्वच्छा दरश लखात। तुलसी रामप्रसाद बिन अविगति जानि न जात॥ तुलसी तल रहि जात है युग तन अचल उपाधि। यहं गति तेहि लखि परत जेहि भई सुमति शुठि साधि॥ करता कारण कालके योग करम मत जान। पुनःकाल करता दुरत कारण रहत प्रमान॥

इति पञ्चमः सर्गः॥ ५॥

जल थल तन गत है सदा ते तुलसी तिहुँ काल। जन्म मरण समुझे बिना भाषत समन विशाल॥ तैं तुलसी करता सदा कारण शब्द न आन। कारण संज्ञा सुख दुखद बिन गुरु तेहि किमि जान॥ कारजरत करता समुझ दुख सुख भोगत सोय। तुलसी श्री गुरुदेव बिन दुखप्रद दूर न होय कारण शब्द स्वरूपमें संज्ञा गुण भव जान। करता सुरुगरुते सुखद तुलसी अपर न आन.॥ गन्ध विभावरि नीर रस सलिल अनल गत ज्ञान। वायुवेगकहँ बिन लखे बुध जन कहहिं प्रमान॥ अनुस्वार अक्षर रहित जानत हैं सब कोय। कह तुलसी जहँलगि वरण तासु रहित नहिं होय॥ आदिहु अन्त-हु है सोई तुलसी और न आन। बिन देखे समुझे बिना किमि कोइ करै प्रमान॥ रहित बिन्दु सब वरणते रेफ सहित सब जान। तुलसी स्वर संयोगते होत वरण पद मान॥ अनु-स्वार सूक्षम यथा तथा वरण अलस्थ। जो सूक्षम अस्थूल सो तुलसी कबहुँ न मूल॥ अनिल अनल पुनि सलिल रज तनगत तनवत होय। बहुरि सो रजगत जल अनल मरुत सहित रवि सोय॥ और भेद सिद्धान्त यह निरखु सुमति करु सोय। तुलसी सुत भव योग बिन पितु संज्ञा नहिं होय॥ संज्ञा कह तब गुण समुझ सुनब शब्द परमान। देखब रूप विशेष है तुलसी वेष बखान॥ होत पिताते पुत्र जिमि जानत को कहु नाहिं। जबलगि सुत परसो नहीं पितु पद लहै न ताहिं॥ तिमि बरणन संज्ञा करै वरण वरण संयोग। तुलसी होय न वरण कर जबलगि वरण वियोग॥ तुलसी देखहु सफलकहँ यहि विधि सुत आधीन। पितु पद परखि सुदृढ़ भयो कोउ कोउ परम प्रवीन॥ जहँ देखो सुत पद सकल भयो पिता पद लोप। तुलसी सो जानै सुई जासु अमोलिक चोप॥ ख्यात सुवर्न

तिहुँ लोकमहँ महाप्रबल अति सोइ। जो कोइ तेहि पाछे करै, सो पर आगे होइ॥ तुलसी होत नहीं कछुक रहित सुबन व्यवहार। तोहीं ते अग्रज भयो सब विधि तेहि परचार॥ सुवन देखि भूले सकल भय अति परम अधीन। तुलसी जेहि समुझाइये सो मन करत मलीन॥ मानत सो साँचो हिये सुनत सुनावत वादि॥ तुलसीते समुझत नहीं जो पद अमल अनादि॥ जाहि कहत हैं सकल सो जेहि कह तव सो ऐन॥ तुलसी ताहि समुझि हिये अजहुँ करहु चित बैन॥ तुलसी जो है सो नहीं कहत आन सब कोय। यहि विधि परम विडम्बना कहहु न काकहँ होय॥ गुरु करिबो सिद्धान्त यह होय यथारथ बोध। अनुचित उचित लखाय उर तुलसी मिटै विरोध॥ सतसङ्गतिको फल यहो संशय लहै न लेश। है अस्थिर शुचि सरल चित पावै पुनि न कलेश॥ जो मरबो पद सबन को यह लगि साध असाध। कवन हेतु उपदेश गुरु सतसङ्गति भव बाध॥ जो भावो कछु है नहीं झूठो गुरु सतसङ्ग। ऐसि कुमति ते झूठ गुरु सन्तनको परसङ्ग॥ जोखे लखि नाहीं परत तुलसी परपद आप। तौलगि सोहि विवश सकल, कहत पुत्रको बाप॥ जहँलगि संज्ञा वरण भो जासु कहेते होय। तो तुलसीसे है सबल आन कहा कछु होय॥ अपने नैनन देखि जे चलहिं सुमतिवर लोग। तिनहिं न बिपति विषाद रुज तुलसी सुमति सुयोग॥ मृगा गगनचर ज्ञान विन करत नहीं पहिचान। परवश शठ हठ तजत सुख तुलसी फिरत भुलान॥ काह कहो तेहि तोहिंके जेहि उपदेशेउ तात। तुलसी कहत सो दुख सहत समुझ रहित हित बात॥ बिन काटे तरुवर यथा मिटै कवन विधि छाँह। त्यों तुलसी उपदेश बिन निःसंशय कोउ नाँह॥ अपनो कर-

तब आप लखि सुनि गुनि आप बिचार। तौ तोहिकहँ दुख-दा महा सुखदा सुमति अधार॥ ब्राह्मण वर विद्या विनय सुरति विवेकनिधान। पथ रति अनय अतीत मति सहित दया श्रुति मान॥ विनयछत्र शिर जासुके प्रतिपद पर-उपकार। तुलसी सो चलो सही रहित सकल व्यभिचार॥ बैश विनय मग पग धरै हरै कटुक घर बैन। सदय सदा शुचि सरलता होय अचल सुख ऐन॥ शूद्र चुद्र पथपरि हरै हृदय विप्रपद मान। तुलसी मन समता सुमति सकल जीव सम जान॥ हेतु वरण वर शुचि रहनि रसनि रास सुखसार। चाहन काम सुरा न रस तुलसी सुदृढ़ विचार॥ यथालाभ सन्तोषरत गृह मगबन सगरीत। सो तुलसी सुखमें सदा जिन तनु विभव विनीत॥ रहै जहां विचरैं तहां कमी कहूँ कछु नाहि। तुलसी तहँ आनन्द सँग जात यथा सँग छाहिं॥ करत कर्म जेहिको सदा सो मन दुखदातार। तुलसी जो समुझै मनहिं तौ तेहि तजै बिचार॥ कहत सुनत समुझत लखत तेहिते विपति न जाय। तुलसी सबते बिलग हैं जबतै नहिं ठहराय॥ सुनत कोटि कोटिन कहत कौड़ी हाथ न एक। देखत सकल पुराण श्रुति तापर रहित विवेक॥ समुझत है सन्तोष धन याते अधिक न आन। गहत नहीं तुलसी कहत ताते अबुध मजान॥ कहा होत देखे कहे सुनि समुझे सब रीति। तुलसी जबलगि होत नहिं सुखद रामपद प्रीति॥ कोटिन साधनके किये अन्तरमल नहिं जाय। तुलसी जौ लगि सकल गुण सहित न कर्म नशाय॥ चाह बनी जबलगि सकल तबलगि साधन सार। तामहँ अमित कलेशकर तुलसी देख बिचार॥ चाह किये दुखिया सकल ब्रह्मादिक सब कोय। निश्चलता तुलसी कठिन राम कृपावश होय॥

अपनो कमन आपकहँ भलो मन्द जेहि काल। तब जानब तुलसी भई अतिशय बुद्धि विशाल॥ तुलसी जबलगि लखि परत देह प्राणको भेद। तबलगि कैसेके मिटै करम जनित बहु खेद॥ जोइ देह सोइ प्राण है प्राण देह नहिं दोय। तुलसी जो लखि पाय है सो निरदय नहिं होय॥ तुलसीते झूंठो भयो करि झूठे सँग प्रीति। है साँचो हो साँच जब गहै रामकी रीति॥ झूंठी रचना साँच है रचत नहीं अलसात। वरजतहू झगरत बिहठि नेक न बूझत बात॥ करम खरी कर मोह थल अङ्ग चराचर जाल। हरत भरत भर हर गनत जगत जोतखी काल॥ कहन काल किल सकल बुध ताकर यह व्यवहार। उतपति थिति लय होत है सकल तासु अनुहार॥ अङ्कुर किशलय दल विपुल शाखायुत वर मूल। फूलि फरत ऋतु अनुहरत तुलसी सकल सतूल॥ कहतब करतब सकल तेहि ताहि रहत नहि आन। जानन मानन आन विधि अनूमान अभिमान॥ हानि लाभ जय विधि विजय ज्ञान दान सनमान। खान पान शुचि रुचि अशुचि तुलसी विदित विधान॥ शालक पालक सम विषम रम भम गम गति ज्ञान। भट घट लट नट नादि जट तुलसी रहित न जान॥ कठिन करम करणी कथन करता कारक काम॥ काय कष्ट कारण करम होत काल सम शाम॥ खबर आतमा वोध वर खर बिन कबहुँ न होय। तुलसी खसम विहीन जे ते खरतर नहिं सोय॥ चित रति विन व्यवहरित बिधि अगम सुगम जय नीच। धीर धरम धारण हरण तुलसी परत न बीच॥ शब्द रूप विवरन विशद तासु योग भव नाम। करता रूप बहु जाति तेहि संज्ञा सब गुणधाम॥ नाम जाति गुण देखि के भयो प्रबल उर भर्म। तुलसी गुरुउपदेश बिन जानि सकै

को मर्म॥ अपन कर्म वर मानिकै आप बँधो सब कोय। कार-जरत करता भयो आपन समुझत सोय॥ को करता कारण लखै कारज अगम प्रभाव। जो जहँ सो तहँ तर हरष तुलसी सहज सुभाव॥ तुलसी बिन गुरुको लखै वर्त्तमान विधिरीत। कहु केहि कारणतें भयो सूर उष्ण शशि शीत॥ करता कारण कर्मते पर पर आतमज्ञान॥ होत न बिन उपदेश गुरु जो षट वेद पुरान॥ प्रथम ज्ञान समुझै नहीं विधि निषेध व्यवहार उचितानुचितहि हेरि धरि करतब करिय सँभार॥ जब मन-महँ ठहराय विधि श्रीगुरुवरपरसाद। इहि बिधि परमातम लखै तुलसी मिटै विषाद॥ बरबस करत विरोध हठि होन चहत अकहीन। गहि गति बक वृक श्वान इव तुलसी परम प्रवीन॥ आक कर्म भेषज विदित लखत नहीं मतिहीन। तुलसी शठ अकबश विहठि दिन दिन दीन मलीन॥ करता-हीते कर्म युग सो गुण दोष सरूप। करत भोग करतब यथा होय रङ्क किन भूप॥ वेद पुराणरुशास्त्र युत निज बुधिवल अनु-मान। निज निज करि करि है बहुरि कहु तुलसी परमान॥ विविध प्रकार कथन करै जाहि यथा भवमान। तुलसी सु-गुरुप्रसादबल कोउ कोउ कहत प्रमान॥ उर डर अतिलघु होनको भव लघु सुरति भुलान। स्वर्गलाह लखि परत नहि लखत लोहको हान॥ नैनदोष निज कहत नहिं विविध बनावत बात। सहत जानि तुलसी विपति तदपि न नेक लजात॥ करत चातुरी मोहवश लखत न निज हित हान। शुक मरकट इव गहत हठ तुलसी परम सुजान॥ दुखिया सकल प्रकार शठ समु-झि परतही नाहिं। लखत न कण्टक मीन जिमि अशन भषत भर्म नाहिं॥ तुलसी निज मनकामना चहत सुन्यकहँ सेय। वचन गाय सबकै विविध कहहु पयस केहि देय॥ बातहि बात

हि बनि परै बातहि बात नशाय। बातहि आदिहि दीप भव बीतहि अन्त बताय॥ बातहिते बनि आवई बातहिते बनि जात। बातहिते बर बर मिलत बातहिते बौरात॥ बात बिना अतिशय बिकल बातहि ते हरषात। बनत बात बर बातते करत बात बरघात॥ तुलसी जानु बात बिन बिगरत हर इक बात। अनजाने दुख बातके जानिपरत कुशलात॥ प्रेम बैर औ पुण्य अघ यश अपयश जय हान। बात बीज इन सबनको तुलसी कहहिं सुजान॥ सदा भजन गुरु साधु द्विज जीव दया सम जान। सुखद सुनै रत सत्यव्रत स्वर्ग सप्तसोपान॥ वञ्चक विधिरत नरतनय विधिहिंसा अतिलीन। तुलसी जगमहँ बिदित वर नरकनिशेनी तीन॥ जे नर जग गुण दोषयुत तुलसी वदत बिचार। कबहूँ सुखी कबहूँ दुखित उदय अस्त व्यवहार॥ कारज जगके युगलतम काल अचल बलवान। त्रिविध विकल तेते हटहिं तुलसी कहहिं प्रमान॥ अनुभव अमल अनूप गुरु कछुक शास्त्रगति होय॥ बचे काल क्रम दोषते कहहिं सुबुध सब कोय॥ सब विधि पूरण धामबर राम अपर नहिं आन। ताकी कृपाकटाक्षते होत हिये दृढ़ज्ञान॥ सो स्वामी सो तर सखा सो वर सुखदातार। तात मात आपदहरण सो असमथ अधार॥ सुखद दुखद कारज कठिन जानत को तेहि नाहिं। जानेहुपर बिन गुरुकृपा करतब बनत न काहिं॥ तुलसी सकल प्रधान है वेद विदित सुखधाम। तामहँ समुझब कठिन अति युगलभेद गुणनाम॥ नाम कहत सुख होत है नाम कहत दुख जात। नाम कहत सुख जात दुरि नाम कहत दुख खात॥ नाम कहत वैकुण्ठसुख नाम कहत अघखान। तुलसी तोते उर समुझि करहु नाम पहिचान॥ चारों चौदह अष्टदश रस समुझब भरिपूर। नामभेद समुझे बिना सकल समुझमहँ धूर।

बार दिवस निशि मासमित असित वरष परमान। उत्तर दच्छिण आश रवि भेद सकलमहँ जान॥ कर्म शुभाशुभ मित्र अरि रोदन हँसन बखान॥ और भेद अति अमित है कहँ लगि कहिय प्रमान॥ जहँलगि जन देखब सुनब समुझब-कहब सुरीत। भेदरहित कछु है नहीं तुलसी वदहिं विनीत॥ भेद याहि विधि नाममहँ बिनु गुरु जान न कोय॥ तुलसी कहहिं विनीत वर ज्यों विरञ्चि शिवहोय॥

इति षष्ठःसर्गः ६॥

तिनहिं पढ़े तिनहीं सुने तिनहिं सुमति परगास। जिन आशा पाछे करे गहे अलख नीसास॥ तबलगि योगी जगतगुरु जबलगि रहै निरास। जब आशा मनमें जगी जग गुरु योगी दास॥ हित पुनीत स्वारथ सबहि अहित अशुचि बिन-चाउ। निजमुख माणिक सम दशन भूमि परत भीहाउ॥ निज गुणघटत न नागनग हर्षि न पहिरत कोल। गुञ्जा प्रभुभूषण करे ताते बढ़ न मोल॥ देइ सुमन करि वास तिल परिहरि खरि रस-लेत। स्वारथहित भूतल भरे मनमें चक तन सेत॥ अँसुवन पथिक निराशते तटभुइ सजल सरूप। तुलसी किन बचे नहीं इन सबथल केरूप॥ तुलसी मित्र महासुखद सबहि मित्रकी चाउ। निकट भये विलसत सुखप एक कृपाकर छाउ॥ मित्र कोप बरतर सुखद अनहित मृदुल कराल॥ द्रुमदल शिशिर सुखात सब सह निदाघ अति लाल॥ खल नेरे गुण मान नहिं मेटहि दाता वोप॥ जिमि-जल तुलसी देत रवि जलद करत तेहि लोप॥ बरषत हरषत लोगसब करषत लखत न कोय। तुलसी भूपति भानुसम प्रजा भागवश होय॥ माली भानु कृशानु सम नीतिनिपुण महिपाल। प्रजा भागवश होहिंगे कबहिं कबहिं कलिकाल॥

समयपरे सुपुरुष नरन लघुकरि गनिय न कोय। नायक पीपर बीजसम बचैतो तरुवर होय॥ बड़े राम रत जगतमें के परहित चित जाहि॥ प्रेमपेज निबही जिन्हे बड़े सो सबही चाहि॥ तुलसी सन्तनते सुनै सन्तत इहै विचार॥ तनधन चञ्चल अचल जग युगयुग परउपकार॥ ऊँचहि आपद बिभव वर नीचहि दत्त न होत॥ हानिवृद्धि द्विजराजकहँ नहिं तारागण कोय॥ बड़े रतहिं लघुके गुणहिं तुलसी लघुहि न हेत। गुञ्जाते मुक्ताअरुण गुञ्जा होत न श्वेत॥ होहिं बड़े लघु समथ सह तो लघु सकहिं न काढ़ि। चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखतते बाढ़ि॥ उरग तुरग नारी नृपति नरनीचो हथियार। तुलसी परखत रहब नित इनहिं न पलटत बार॥ दुरजन आप समान करि को राखै हितलागि। तपततोय सह जाहि पुनि पलटि बतावत आगि॥ मन्त्रतन्त्र-तन्त्रीतिया पुरुष अश्व धन पाठ। पुनि गुण योगवियोगते तुरत जाहिं ये आठ॥ नीच निचाई नहिं तजै जो पावहि सतसङ्ग। तुलसी चन्दनविटप बसि विनविष भय न भुजङ्ग॥ दुरजन दरपणसम सदा करि देखो हिय दौर॥ सनमुखकी गति और है विमख भये कछु और॥ मित्रक अवगुण मित्रको परपहँ भाषत नाहिं। कूपछाँह गिमि आपनी राखत आपहि माहिं॥ तुलसी सो समरथ सुमति सुकृती साधु सुजान। जो बिचारि व्यवहरत जग खरचलाभ अनुमान॥ सीख सखा सेवक सचिव सुतिय सिखावन साँच॥ सुनि करिये पुनि परिहरिय परमनरञ्जन पाँच॥ प्रष्टिहि निज रुचि काज करि रुष्टहिं काज बिगारि। तिया तनय सेवक सखा मनकेकण्टक चारि॥ नारि नगर भोजन सचिव सेवक सखा अगार॥ सरस परिहरे रङ्गरस निरस विषा-दविकार॥ दीरघ रोगी दारिदी कटुवच लोलुपलोग। तुलसी प्राण समानज्यों तुरित त्यागिबे योग॥ धाय लगे लोहा ललकि

खचित लेइयनीच। समरथ पापीसों ब-र तीन बेसाही मीच॥ तुलसी स्वारथ सामुहे परमारथ तन पीठि॥ अन्ध कहे दूख पावकहि डिठियारे हियडीठि॥ अनसमझे शोचवर अवशि समुझिहै आप॥ तुलसी आपन समुझिबिन पलपलपर परि-ताप॥ कूप खनहिं मन्दिर जरत लावहिं धारि बबूर। बोये ला-चह समय बिन कुमतिशिरोमणि क्रूर॥ निडर अनय करि अन-कुशल बोसवाइ सम होय। गयो गयो कह सुमतिजन भयो कुमति कह कोय॥ बहुसुत बहुरुचि बहुवचन बहु अचारव्यवहार इनको भलो मनाइबो इह अज्ञान अपार॥ अपयश योग कि जानकी मणिचोरी कि कान्ह। तुलसीलोग रिझाइबो कालि कातिबो नान्ह॥ माँगि मधुकरी खात जे सोवत पाँव पसारि। पापप्रतिष्ठ बढ़ि परी तुलसी बाढ़ीरारि॥ लही आँखिकवआँध-रहि बाँझ पूत कव जाय। कव कोढ़ी काया लही जगबहराइच-जाय॥ या जगकी बिपरीति गति काहि कहो समुझाय। जल जलिगो झख बाधिगो जनतुलसी मुसुकाइ॥ के जूझिबो कि बूझिबो दान कि कायकलेश। चारिचारु परलोकपथ यथा योगउपदेश॥ बुध कि मान सरवेदवत मते खेत सब सींच॥ तुलसी कृषिगति जानिबो उत्तम मध्यम नीच॥ सहि कुबोल साससति असम पाय अनट अपमान। तुलसी धर्म न परिहरहिं ते वर सन्त सुजान॥ अनहित ज्यों परहित किये आपनहित तमजान॥ तुलसी चारुबिचारमति करिय काज सममान॥ मिथ्यामाहुर सजनकहँ खलहिं गरलसम साँच। तुलसी परसि परात जिमि पारद पावक आँच॥ तुलसी खलबाणी विमल सुनि समुझव हिय हेरि। रामराज बाधक भई मन्दमन्थरा चेरि दान दयादिक युद्धके बीरधीर नहिं आन। तुलसी कहहिं बिनी-त इति ते नरवर परमान॥ तुलसी साथी विपतिके विद्याविनय-

विवेक। साहस सुकृत सत्यव्रत रामभरोसो एक॥ तुलसी असमयके सखा साहस धर्मविचार। सुकृतशील स्वभावरिज रामशरण आधार॥ विद्याविनय विवेकरति रोति जासु उरहोय। रामपरायण सो सदा आपदताहिनकोय॥ बिनप्रपञ्च खल भीख-भलि नहिं फल किये कलेश। बामनबलिसों लीन्हिछलि दीन्ह सबहि उपदेश॥ विबुधकाज बामन बलिहि छलो भलो जिय-जानि। प्रभुता तजि वशभेतदपि मनते गइनगलानि॥ बढ़ेबढ़े-तेछलकरें जनम कनौड़ेहोहिं। तुलसी श्रीपति शिर लसैं बलि-वामन गति सोहिं॥ खल उपकार विकारफलतुलसीजानजहान मेखट मरकट बणिक बक कथा सत्य उपखान॥ ज्यों मूरख उपदेशके होते योग जहान। दुरयोधन कहबोधकिन आयेश्याम सुजान॥ हितपर बढ़त विरोध जब अनहितपर अपमान। राम-विमुख विधि बामगति सगुन अघाय अमान॥ साइसही सिख कोपवश किये कठिन परिपाक। शठ सङ्कटभाजन भये हठि कुजती कपिकाक॥ मारि सोंइ करि खोजलें करिमतसब बिन-बास। सुये नीच तिनमोचते जे इनके विश्वास॥ रोक आपनी बूझ पर खीझ विचारविहीन। तेउपदेशन मानहीं मोह महोद धि मोन॥ समुझि सुनीत कुनीतरत जागतहीं रहस.य। उपदे-शिबोजगाइबो तुलसी उचित न होय॥ परमारथ पथमत समु-झि लसत विषय लपटान। उतरि चिताते अधजरी मानहुँ सती परान॥ तजत अमिय उपदेशगरु भजत विषय विषखान। चन्द्रकिरणधोखे पयस चाटत जिमि शठश्वान॥ सुरसदतन तोरणपुरिन निपट कुचालि कुसाज। मनहुं मवासे मारि कलि राजत .सहित समाज॥ चोर चतुर बटमार भट प्रभु प्रिय भडुआभण्ड। सब भच्छो परमारथो कलि सुपन्थ पाखण्ड॥ शील गंवार नृपाल कलि जमन महामहिपाल। साम न

दाम न भेद कलि केवल दण्ड कराल॥ पाप पलीता कठिन गुरु गोला पुहमपाल॥ रांग रोष गण दोषको साखी हृदय-सरोज। तुलसी विकसत मित्र लखि सकुचत देखि मनोज॥ बयर सनेह सयानपहि तुलसी जो नहिं जान। ते कि प्रेमपग मग धरतै पशु बिनु पूछ बखान॥ रामदास यह जायके जो नर कथहि सयान। तुलसी अपने खांड़ हूँ खाक मिलावत ख्वान॥ तिविध एक विधि प्रभु अगण प्रजहिं सँवारहि राउ। करते होत कृपाणको कठिन घोर घन घाउ॥ काल विलोकत ईशहव भानु काल अनुहार। रवि हि राहु राजहिं प्रजा बुध व्यवहरहि विचार॥ यथा अमल पावन पवन पाप सुसङ्ग कुसङ्ग। कहिय सुवास कुवास तिमि काल महीश प्रसङ्ग॥ भलउ चलत पथ शोच भय न्टप नियोग नय नेम। कुतिय सु-भूषण भूषियत लोह निवारित हेम॥ सुधा कुनाज सुनाज फल आम अशनसम जान। सुप्रभु प्रजाहित लेहि कर सामादिक अनुमान॥ पाके पकए विटप दल उत्तम मध्यम नीच। फल नर लहहिं नरेश तिमि करि विचार मन बीच॥ धरणि धेनु चरि धरम तन प्रजा सुवत्स पन्हाय। हाथ कछ नहिं लागि है किये गोष्ठकी गाय॥ टङ्क टङ्क हूँ परत गिरि शाखा सहस खजूरि। गरहि कुन्टप करि करि कुनय सो कुचाज भुवि भूरि॥ भूमि रुचिर रावणसभा अङ्गदपद महिपाल। धर्म राम नय सोनबल अचल होत तिहुँ-काल॥ प्रीति रामपद नीतिरत धर्म प्रतीय स्वभाव। प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुँ वचन मन काय॥ करके कर मनके मनहि बचन बचन जिय जानि। भूपति भलहि न परिहरहिं विनय विभूति सयानि॥ गोली बाण सुमन्त सुर समुझि उलटि गति देखु। उत्तम मध्यम नीच

प्रभु बचन बिचारु बिशेखु॥ भल सयाने सलिल इव राख शीश अपनाव। बूड़त लखि डगमगत अति चपरि चहूँ-दिशि धाव॥ रच्यत राज समाज घर तन धन धर्म सुबाहु। सत्य सुसचिवहि सौंपि सुख बिलसहि निज नरनाहु॥ रसना मन्त्री दशन जन तोष पोष सब काज। प्रभु कैसे नृप दानवृक बालक राज समाज॥ लकरी डोवा करछुली सरस काज अनुहारि। सुप्रभुजु गहहिं न परिहरहिं सेवक सखा बिचारि॥ प्रभु समीप छोटे बड़े अचल होहिं बलवान। तुलसी बिदित बिलोकहीं कर अँगुली अनुमान॥ तुलसी भल बरषत बढ़त निज मूलहि अनुकूल। सकल भाँति सबकहँ सुखद दलन सहित बिन फूल॥ सधन सगुण सधरम सगण सजन सुसबल महीप। तुलसी जे अभिमान बिन ते त्रिभुवन-के दीप॥ साधन समय सुसिद्ध लहि उभय मूल अनुकूल। तुलसी तीनों समयसम ते महि मङ्गलमूल॥ रामायण अनु-हरत शिव जग भो भारत रीति। तुलसी शठकी को सुनै कलि कुचालिपर प्रीति॥ सुहित सुखद गुणयुत सदा काल योग दुख होय। घर धन जारत अनल जिमि त्यागे सुख नहिं कोय॥ तुलसी सरवर रूप जिमि तिमि चेतन पट माहि। नहि सूझत पनहूतन सो संमुझ सुबुध जन ताहि॥ तुलसी झगरा बड़ेनके बीच परहु जनि धाय। लहै लोह पाहन दोऊ बीच रुई जरि जाय॥ अर्थ आदिहन परिहरहु तुलसी सहित बिचार। अन्त गहन सबकहँ सुने सन्त नमत सुखसार॥ गहु उपकार बिचार पद माफल हानि बिमूल। अहो जानु तुलसी यतन बिन जाने इव शूल॥ नीच निरावहि निरस तरु तुलसी सींचहि ऊख। पोषत पयद समान जल बिषय ऊख-के रूख॥ लोक बेदहूँलौं दगो नाम मूलको पोच। धरम-

राज यमराज यम कहत सकोच न शोच॥ तुलसी देवल रामके लागे लाख करोर। काक अभागे हगि भरे महिमा भय-उ न थोर॥ भलो कहहि जाने बिना कि अथवा अपवाद। तुलसी गाँड़र जानि जिय करहु न हरष विषाद॥ तन धन महिमा धर्म जेहि जाकहँ सह अभिमान। तुलसी जियत बिडम्बना परिणामहु गति जान॥ बड़ो बिबुध दरबारते भूमि भूप दरबार। जापक पूजक देखियत सहत निरादर भार॥ खग मृग मीन पुनीत किय बनहु राम नैपाल। कुनद बाल रावण घरहि सुखद बन्धु किय काल॥ रामलषण बिजयी भये सुनहु गरीबनिवाज। मुखर बालि रावण गये घरही सहित समाज॥ द्वारे टाट न दै सकहि तुलसी जे नर नीच। निदरहि बलि हरिचन्द्रकहँ किहुका करन दधीच॥ तुलसी निज कीरति चहहि परकीरतिकहँ खोय। तिनके मुँह मसि लागि है मिटहि न मरिहैं धोय॥ नीच चङ्गसम जानि-बो सुनि लखि तुलसीदास। ढील देत महि गिरि परत खैंचत चढ़त अकास॥ सहबासी काचो भषे पुरजन पाक प्रवीन। कालछेप किहि बिधि करै तुलसी खग मृग मीन॥ बड़े पाप बाढ़े किये छोटे करतल जात। तुलसी तापर सुख चहत विधिपर बहुत रिसात॥ सुमति निवारहि परिहरहि दल सुमनहु संग्राम। सकल गये तनबिन भये साखी यादव काम॥ कलइ न जानबि छोट करि कठिन परम परिणाम। लगत अनल अंत नीच घर जरत धनिक धनधाम॥ जूझे ते भल बूझिबो भला जीतते हारि। जहाँ जाइ जहँ डाइबो भला जो करिय बिचारि॥ तुलसी तीन प्रकारते हित अनहित पहिचान। बरबस परे परोसवश परे मामला जान॥ दुर-जन बदन कमान सम बचन बिमुञ्चत तीर। सज्जन उर

वेधत नहीं छमा समाह शरीर॥ कौरव पाण्डव जानिबो क्रोध छमाके सोम। पाँचहि मारि नसके सकै सयो निपाते भीम॥ जो मधु दीन्हे ते मरे माहुर देउं न ताउ। जग जिति हारे परशुरा हारि जिते रघुराउ॥ क्रोध न रसना खोलिये बड़ खोलब तरवारि। सुनत मधुर परिणाम हित बोलब बचन विचारि॥ तुलसी मीठो समयते माँगो मिलेज मीच। सुधा सुधाकर समय बिन कालकूटते नीच॥ पाही खेती लगन बड़ि ऋण कुब्याज मग खेतु। बैर आपते बड़नते कियो पाँच दुख हेतु॥ रीझ खीझ गुरु देत शिष शिषहि सुसाहब साध। तोरि खाय फल होय भल तरु काटे अपराध॥ चढ़ो बबूरहि चङ्ग जिमि ज्ञानते शोक समाज। करम धरम सुख सम्पदा तिमि जानिबो कुराज॥ पेट न फूटत बिन कहे कहे न लागत ढेर। बोलब वचन विचारयुत समुझि सफेर कुफेर॥ प्रौति सगाई सकल विधि बनिज उपाय अनेक। कल बल छल कलि-मल मलिन डहकत एकहि एक॥ दम्भसहित कलि धर्म सब छल समेत व्यवहार। स्वारथ सहित सनेह सब रुचि अनुहरत अचार॥ धातु बधी निरुपाधिवर सदगुरु लाभ सुमीत। दम्भ दरश कलिकालमहँ पोथिन सुनब सुनीत॥ कायर कूर कपूत कलि घरघर सरिस उधार॥ ज्यों जगदीशतो अति भलो ज्यों महीशतो भार। जन्म जन्म तुलसी चहत राम-चरण अनुराग॥ का भाषाका संसकृत विभव चाहिये साँच कामतो आवे कामरी का लै करिय कमाच॥ बरण विशद मुक्तासरिस अर्थ सूत सम तूल। सतसैया जग बरविशद गुण शोभा सुखमूल॥ बर माला बाला समति उर धारै युत नेह। सुख शोभा सरसाय नित लहै रामपतिगेह॥ भूप कइहि लघु गुणिनकहँ गुणी कहहि लघु भूप। महि गिरि गत दोउ

लखत जिमि तुलसी खरवस रूप ॥ दोहा चारु विचारु चलु परिहरि वाद विवाद । सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरयाद ॥

इति सप्तमः सर्गः ॥

इति ॥
